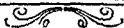




मुद्रक और प्रकाशक—श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ
जैनसिद्धान्तप्रकाशक (पवित्र) प्रेस
नं० १ चिन्मफोप हेल, धाधवाजार—वल्हकछा



पाठ और विषयोंकी सूची ।

पाठोंके नाम	पृष्ठसंख्या
१ । गुरु शिष्य प्रश्नोत्तर (सम्यग्दर्शन)	१
२ । अविनयी बालक (कहानी)	३
३ । देवस्तुति—	
१ पहिली स्तुति बुधजन ह्य	५
२ दूसरी स्तुति दौलनरामह्य	६
४ । दर्शन, पूजा, भारती विनय	७
५ । उदारता (कहानी)	९
६ । जिनराणों मानाकी स्तुति (कविता)	११
७ । नीरोगता	१२
८ । श्रावणके चारह मनेके नाम	१४
९ । लकड़हारा और बसका कुहाडा (कहानी)	१६
१० । गुरुस्तुति (भूधरदासकृत)	१७
११ । जीय अजीय	१८
१२ । अहिंसाणुमत	२१
१३ । मनसुख और धनसुख (कहानी)	२२
१४ । बारह भायता	२४
१५ । सत्याणुमत	२६
१६ । सत्यवादी बालक (कहानी)	२७
१७ । सत्यमाटी चोर (कहानी)	२९
१८ । डरपोक लडका (कहानी)	३१
१९ । सत्यके विषयमें दोहे	३३

२० । आहार (भोजन)	३४
२१ । अर्योर्षाणुघ्न	३६
२२ । चोरीका कल (कहानी)	३७
२३ । कृष्णद और मुकुन्दीलाल (कहानी)	३९
२४ । विद्याप्रशस्ता (कविता)	४२
२५ । गुरुशिष्यता संवाद	४३
२६ । सदागरी और भस्मदाचारी बालक (कहानी)	४४
२७ । स्वरूपचन्द्र (क	४७
२८ । नीतिके दोहे	४८
२९ । जल (पानी)	४९
३० । रात्रिभोजनत्याग (कहानी)	५०
३१ । जलमालन या जत्रव्रत	५१
३२ । मेंढक और घेल (कहानी)	५२
३३ । यात्रु रहने लायक १० नियम	५३
३४ । नीतिके दोहे	५५
३५ । अजीबके भेद (गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर)	५६
३६ । प्रत्युपकार (कहानी)	६०
३७ । कात्र	६१
३८ । नीतिके दोहे	६३
३९ । परिधम	६४
४० । आठ फम (गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर)	६६
४१ । बाघ और घकरीका घया (कहानी)	६९
४२ । नीतिके दोहे	७१
४३ । समयविभाग	७१

४४ । चार गति	७३
४५ । सेठके पाच पुत्र (कहानी)	७५
४६ । नीतिके दोहे	७६
४७ । ग्रीष्म ऋतु	७७
४८ । वर्षा ऋतु	७८
४९ । शरद ऋतु	७८
५० । हेमंत ऋतु	७९
५१ । शीत ऋतु	८०
५२ । वसंत ऋतु	८०
५२ । जल घृष्टि ओले व धरफ	८१
५४ । आभार मानना	८३
५५ । सत्सगति (कहानी)	८५
५६ । सत्सगति प्रशंसा (स्वर्गीय प० गोपालदासकृत)	८६
५७ । कौआ और चिड़िया	९०
५८ । सुन्दरलाल (हिममतकी कहानी)	९३
५९ । विद्यार्थीभिद	९६
६० । दयालु दयाराम (धयाकी कहानी)	९८
६१ । आमका सदुपयोग	१००
६२ । गढा रोगे सो ही पढे	१००
६३ । मोतीकी उत्पत्ति	१०४
६४ । गुरु शिष्यप्रश्नोत्तर	१०७



सूचना ।

चिन्तित हो कि जैनशास्त्रबोधकथा दूसरा भाग सन् १९०६ में छपा था, परंतु उसमें अनेक पाठ तीसरे चौथे भागके आ जातेसे वे पाठ उठाकर नये नये दूसरा भाग जहातक मुक्तसे बना सरलताके साथ जैनधर्मसंबंधी विशेष शिक्षा देनेकेलिये बनाकर प्रकाशित किया है । इसके पाठोंका सूची देगने या आद्यो पाठ पढ़नेसे आपकी मालूम होगा कि इसके प्रत्येक पाठमें जैन धर्मकी शिक्षा व साधारण नीतिदान यथाशक्ति भरा गया है ।

इस पुस्तकमें एक विशेषता यह भी है कि अनेक पाठशाळाओंमें स्वास्थ्य व धर्मसंबंधी जागृताय विचार आदिकी पुस्तकें जुड़ी पढ़ानी पड़ती हैं सा ये विषय भा इसमें सरलताके साथ प्रश्नोत्तररूपमें लगा दिये गये हैं इसलिये जुड़ी कोई पुस्तक पढ़ानेकी आवश्यकता नहीं रहेगी, इसी एक पुस्तकके पढ़ानेसे तथा इसके भागके भाग पढ़ानेसे जैनशास्त्रके हृदयमें जैनधर्म की शिक्षा ऐसी जम जायगी कि धृष्ट फिर चाहे जितना भंगरेजी व अन्य पुरतर्के क्यों न पड़े, जैन धर्मकी वासनासे रहित नहीं होंगे । इसके सिवाय जैनशास्त्रालाओंमें जो द्वाय हिन्दी भाषाका व्याकरण प्रायः नहीं पढ़ाया जाता, इसीलिये इन भागोंमें व्याकरण विषयक पाठ भी साथ २ देना प्रारंभ कर दिया है । इसलिये ये सब ही भाग आवश्यकताय समस्त विषयोंको शिक्षा देनेके लिये रामस्त जैनशास्त्रालाओंमें हमेशा पढ़ाने लायक हो जायेंगे अत एव जैनशास्त्रालाओंके अधिकारी महाशयोंको चाहिये कि—समस्त पाठशाळाओंमें इसका ही प्रवेश कराके बालकोंको जैन धर्मकी शिक्षासे शिक्षित करें ।



श्रीपरमात्मने नम ।

जैनवालवोधक

द्वितीय भाग ।

— ❧ ❧ ❧ ❧ —

दोहा ।

अष्टादश द्रूपण रहित, गुण अनन्त भगवन्त ।
सत्र जनहित उपदेश फर, नमहु देव अरहन्त ॥ १ ॥
परिगह आग्भते विरत, त्रिपयत्रासनातीत ।
ज्ञान ध्यान तपमें भगन, नमो सुगुरु करि प्रीत ॥ २ ॥
अनेनात विज्ञानयुत, उस्तुप्रभाशन मान ।
सत्र जीवन हितकर सदा, उदों ध्राजिनयान ॥ ३ ॥
जिनने उचन प्रसादते, प्रगट रहा वृषभान ।
मन धन तन कर नमत ह, धर्धमान भगवान ॥ ४ ॥
इह त्रिधि इष्ट प्रणाम करि, जिनवाणी उरप्रारि ।
जतवालवोधक द्वितीय, लिखू वालहितकारि ॥ ५ ॥

पहिला पाठ ।

गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर (सम्यग्दर्शन)

शिष्य—गुरुजी ! आज हम सम्यग्दर्शनके विषयमें कुछ
प्रश्न करना है । आपकी आज्ञा हो तो किया जाय ।

गुरु—भाई हमने कई बार कह दिया है कि जो बात समझ में नहीं आये वा विशेष कुछ जानना हो हमेशा पूछ लिया करो। प्रश्न करनेमें कदापि शर्म न किया करो।

शिष्य—गुरुजी आपन ता हमें उम दिन सच्चे देव गुरु शास्त्रके श्रद्धान करनेको सम्यग्दर्शन बताया था परंतु अनेक भाइयोंकी पूजामें हमारे यहाँक बड़े पंडितजीने तत्त्वार्थमूत्रका अर्थ बाधा था। उसमें उन्होंने सम्यग्दर्शनका स्वरूप और ही कुछ कहा था।

गुरु—उन्होंने क्या कहा था ?

शिष्य—उन्होंने कहा था कि जीव अजीव आसुर उध सर निजरा और मात्र इन सात तत्त्वोंका श्रद्धान (विश्वास) करना सो सम्यग्दर्शन है। सो गुरुजी सम्यग्दर्शन दो प्रकारका होता है ?

गुरु—तुम उसवक्त पंडितजीसे पूछ तो मैं बता सकते थे। खैर अब समझ लो कि—सत्याथ देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करना और सात तत्त्वोंका श्रद्धान करना एक ही बात है। देखो देव गुरु और शास्त्रक उपदेशस सातों तत्त्वोंका स्वरूप मालूम होता है इसलिये देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेसे ना सातों तत्त्वोंका ज्ञान होता है और सातों तत्त्वोंका सत्याथ ज्ञान करनेकलिये देव गुरु वा शास्त्रका आश्रय लेनसे देव गुरु शास्त्रका लाभ हागा इस लिये एकका श्रद्धान करनेसे दूसरेका श्रद्धान अपन आप हो जाता है।

शिष्य—गुरुजी ! देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेमें सातों तत्त्वोंका श्रद्धान कैसे अपने आप होजायगा तथा सात तत्त्वोंका

श्रद्धान करेगा उसको देव गुरु शास्त्रकी श्रद्धा कैसे अपने आप हो जायगा ?

गुरु—भाई ! शास्त्रोंमें ही तो सातों तत्त्व बनाये हैं इसलिये शास्त्रमें श्रद्धान करेगा तो सात तत्त्व आजायगे । उमीषकार सात तत्त्वोंका स्वरूप समझकर श्रद्धान कर लेगा तो शास्त्रजी आजायगे । शास्त्रजी सत्यार्थ देवक या गुरुके कहे हुये हैं, सो जिनके वचनोंमें श्रद्धान होगा तो उन वचनोंके कहनवाले सत्यार्थ देव तथा गुरुमें भी श्रद्धान होगा क्योंकि शास्त्रोंमें ही सत्यार्थदेव गुरुका स्वरूप वर्णनकिया हुआ है, इसलिये देव शास्त्र गुरुका श्रद्धान करना वा सात तत्त्वोंका श्रद्धान करना एक ही बात है । सात तत्त्वोंका स्वरूप तुम सरीखे वचनोंके समझमें आ जाना कठिन है इसलिये हमारे आचार्योंन सम्यग्दर्शनका स्वरूप सोधा मतभानेके लिये देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेको कह दिया है सो तुम्हें इनमेंसे सम्यग्दर्शनका स्वरूप जा सो ग व अच्छा मालूम हो, वही समझकर चाहे तो सात तत्त्वोंका श्रद्धान कर लो, चाहे सच्चे देव गुरु शास्त्र पर श्रद्धान कर लो दोनों एक ही बात है ।

दूसरा पाठ ।

अविनयी बालक ।

जुम्परलाल नामक एक अविनयी बालक था । वह किसीकी भी विनय नहीं करता था और न देव शास्त्र गुरु माता पिता गुरु-रहको हाथ जोड़कर नमस्कारादिकु करता था । उसके पिताने पढ़ानेवाले पण्डितजीसे कहा कि—‘महाराज ! और कुछ चाहे

यह न पढ़ परन्तु इस लडके में विनयगुण सबथा नहीं है मा
इसे उहाँका विनय करना अवश्य सिखा द्य ।' पण्डितजीने
बहुत कुछ प्रयत्न किया परन्तु, कुपरलालमें विनय गुण नहीं
आया ।

पण्डितजीके पड़ोसमें एक अनियेका घर था । उसके घरमें
अचानक ही एक छप्पर गिर पडा । यह अनिया दौडकर पण्डित
जीके घर आ पण्डितजीसे प्रार्थना करने लगा कि—पेरा छप्पर
गिर गया ह, आपक यहा कोई लकड़ोका थभा हा ता कृपाकर
दीजिये । पण्डितजीने अपन लालोस कुपरलालका उ गनीसे
बताकर कहा कि—तुम इस लडकेको लेजाओ । यह लडका
विनयरहित लकड़के समान जड है, इसीका थभे की जगह खडा
करक इसके माथेपर छप्पर रख दो । तत्र कुपरलाल प्रबडाकर
अस अनियेसे बोला कि—नहीं, नहीं ! मुझे माफ करो । मुझसे
छप्परका थभ नही उटायया जायगा । पण्डितजीने कहा कि—
तुझे अवश्य ही थभा बननेके लिये जाना पडेगा पर्योकि तू विन
यरहित थभ सरोखा है । कुपरलालने हाथ जोडकर कहा कि—
मुझे हरगिज न भेजिये, मे आजस विनयी नू गा । आप मुझे
बताये कि विनय किसे कहत है आर किन किनकी विनय करनी
चाहिये । तत्र पण्डितजीने कहा कि—देव गुरु (साधु) शास्त्रजी
मदिरजी ये सब पूजनीय द्य ह । इनको देखते ही हाथ जाड
मस्तक नमाकर नमस्कार (प्रणाम) करना चाहिये, इसीप्रकार
गुण बुद्धि समर सगध उगरदम अ यापक, पण्डित, माता, पिता,
चाचा, मापा, उडा भाई उगरद जा अपनसे बड ह, इन सबको
भी हाथ जोडकर प्रणाम करना चाहिये । इनकी जैसी आज्ञा हो

वैसा ही प्रवर्तना चाहिये । पीठ टेकर बैठना, इनका आदर सत्कार न करना कहना, न मानना, सो ही अविनय है । अतएव आजसे ऐसा कदापि न करके सयकी यथायोग्य विनय करनी चाहिये । जिस पुस्तकसे तुम पढ़ते हो तथा स्लेट पन्सिल दायात कलम वगैरह जिन जिन पदार्थों से विद्यामें सहायता मिलती है, उनको भी पावोंमें नहिं डालना, उनके पाव नहिं लगाना ! यह बात सुनकर कुमारलालने बड़े नभ्रभावसे परिदतजीको हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कहा कि—मै आजसे कभी किसीकी अविनय नहीं करूँगा । आज तक जो मेरा अपराध हुआ सो क्षमा कर ।

तीसरा पाठ ।

देवस्तुति ।

प्रभु पतितपावनमै अपायन, चरन आयो सरनजी ।
 यो विरद आप निहार स्वामी, भेट जामन मरनजी ॥
 तुम ना पिठान्या आन मान्या, देव विविध प्रकारजी ।
 या बुद्धिसेती निज न जाणया, भ्रम गिरया हितकारजी ॥
 भव—विकटवनमें करम बरी, ज्ञानधन मेरो मरथो ।
 तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिरथो ॥
 धन घडी यों धन दिसस यो ही, धन जाम मेरो भयो ।
 अब भाग मेरो उदय आया, दरश प्रभुको लख भयो ॥
 छवि धीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नामाष रने ।
 वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रवि त्रिको दरे ॥
 मिट गयो तिमिर मिथ्यात परा, उदय रवि शतम भयो ।
 यो उर हरख ऐसो भया, मनु रङ्ग विनामणि लया ॥

मै हाथ जोड नवाय मस्तक, धीनऊ तुम चरनजी ।
 सर्वाच्छिष्ट त्रिनाकपति जिन, सुनहु तारन तरनजी ॥
 जांच नही सुरवास पुनि, नरराज परिजन साधजी ।
 'बुध' जाचहु तुम भक्ति भय भय, दीजिये शिरनायजी ॥

इत्यत स्तुति ।

सकल ज्ञ यज्ञायक तदपि, निजानन्द रमणीन ।
 सो जिनेन्द्र जयवत नित, अरि रज रहस विहीन ।

पद्यो छन्द ।

जय धीतराग विज्ञानपूर, जय माहतिमिगिको हरन रुर ।
 जय ज्ञान अनतानतधार, दृगसुख वीरजमाहिन अपार ॥
 जय परमशातिमुद्रासपेत, भाविजनका निज अनुभूतिहेत ।
 भवि भागनयश जागवशाय, तुम धुनि हँ सुनि विभ्रम नशाय ॥
 तुमगुण चिंतत निजपरचिन्तक, प्रगट विघटं, आपद अनेक ।
 तुम जगभूषण दूषणरिपुक्त, सर महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥
 अविरुद्ध शुद्ध चतन स्वस्थ, परमात्म परम पारन अनूप ।
 शुभ अशुभ विभार अभासकीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥
 अष्टादशदापविमुक्त धार सचतुष्टयमय राजत गभीर ।
 मुनि गणधरादि सबत महत, नवकेरवलब्धि रमा धरत ॥
 तुम शासन सेय अपेय जोव, शिव गप जाई जे हँ सदोव ।
 भरसागरमें दुख छार शरि, तारनका धीर न आप टारि ॥
 यह लखि निजदुग्गद हरणवाज, तुमही निमित्त कारण इलाज ।
 जाने, नार्ते में शरण आय, उचरो निज दुख जो चिर लहाय ॥
 मै भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिकल पुण्यपाप ।
 निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ।
 तनपरगातिमें आपो चितार, कबहू न अनुभवो स्वपदसार ॥
 तुमका विन जान जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।
 पशु नारक नर सुर गति मकार, भव धर धर मरघो अनतवार ॥
 अत्र काललब्धिप्रलते दयात्र तुम दशन पाय भयो खुशाल ।
 मन शात भयो मिटि सकलद्रन्द, चारयो स्वातमरस दुखनिकद ॥
 तात अत्र ऐसी करहु नाथ विछुगें न कभी तुअ चरण साथ ।
 तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जग तारनको तुअ विरद एव ॥
 आतमक अहित त्रिपय कपाय, इनर्म मेरी परिणति न जाय ।
 मै रहू आपमें आय लीन । सो करो होहु ज्यों निजापीन ॥
 मेरे न चाह रुछु अंग ईश, रत्नत्रयनिधि दीजै मुनीश ।
 मुझ कारजके कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोह ताप ॥
 अशि शातकरन तपहरनहेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
 पीयत पियप ज्यों रोग जाय सों तुम अनुभवते भव नसाय ॥
 त्रिभुवन तिहु कान मकार कोय, नहिं तुम विन निजसुखदाय होय
 मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजनत्रि उतारन तुम जिहाज ॥
 दोहा ।

तुम गुणगणामणि, गणपती गणत न पावहिं पार ।
 दोल, स्पल्पमात किमि कहै, नमू त्रियोग मभार ॥

चौथा पाठ ।

दर्शन पूजा आरती विनय ।

विद्यार्थियोंको सबेरे ही उठकर प्रथम सात बार नमस्कार-
 मन्त्रका जाप्य करना चाहिये। उसके पश्चात् लघुशुद्धाकी वाधा-

ही तो उसे पिटकर हाथ धो, पञ्चासनसे सीधे बैठकर नमस्कार-
पत्र अस्मिन्माउसा, अरधन सिद्ध इत्यादि मन्त्रोंमें किसी एक
मन्त्रकी पाना नपना चाहिये अथवा सामायिकपाठ पढ़कर
सामायिक करना चाहिये । फिर हा सक तो अथवा पाठ करके
दिशार्मदान जाकर दत्तपत्र करके गरुड जन्म या ताजे जन्मसे स्नान
करके मन्दिरजोम जाकर दर्शनपाठप रताये हुये नियमसे दर्शन
पूजा* करना चाहिये । दर्शन करके दर्शनपाठनकी अथवा ऊपर
लिखी हुई स्तुति भगवानके सामने खड होकर पाठ करके साष्टांग
नमस्कार करना चाहिये । शास्त्रकी सामने छठे पाठमें लिखी
हुई स्तुति वा अथ स्तुति पाठ करके साष्टांग नमस्कार करना
चाहिये । तत्पश्चात् पाठशाना जाकर गुरुजीकी आज्ञानुसार पाठ
पढ़ना चाहिए । इसीप्रकार सामको भी मन्दिरजोम जाकर उक्त
प्रकारसेही दर्शन पूजा करना चाहिए । दर्शनके पश्चात् भगवानकी
आरती होती है ता आरती बुलवाना चाहिए तथा स्वयं आरती
करके दीप धूप चढ़ाकर नमस्कार करना चाहिए । इसीप्रकार
प्रतिदिन करते रहना चाहिए । इसके सिवाय पाठशाना वा राजार
जाने समय रास्ते मन्दिर जी आज्ञाय अथवा दूरमें मन्दिरजीका
शिखरदीख पड तो उसी वक्त जूत उतारकर हाथ जोडकर
भक्तक नवाय कर विनय करना चाहिए क्योंकि मन्दिरजी

* भगवानके सामने दर्शन करते समय चाय- पुष्प, तोंग,
घादाम धगीरह बढा दिया यह पूजा होगी । प्रियार्थियोंकी छुट्टीके
दिन जहातक धनै अष्टद्वयसे पूजा करना तथा पूजा पढ़वाना

भी नव देवताओंमेंसे एक देवता है । इसप्रकार नित्यदशन पृजा आरता विनय कर्त रहनेसे हृदय पवित्र होता है, पुण्य हाता है, पुण्यके प्रभावसे सुख यश और विद्याकी प्राप्ति होती है इसकारण प्रत्येक विद्यार्थीको इसप्रकार हमेशह करते रहना चाहिये ।

पांचवां पाठ ।

उदारता

हर एक जेनी बालकको अपने चित्तमें ओज्ज्वल व कृपणता न रखकर हमेशह उदारता (चित्तको बड़ा) रखना चाहिये क्योंकि दारताके समान दूसरा कोई गुण उत्तम नहीं है । इस दुनियाम जो जो पुरुष उदार हो गये हैं, उन सबका यश (कीर्ति) अभी तक गाया जाता है । प्यारेलाल नामका एक लडका जय पुरम रहता था । उसको उदारभावक कारण उड़ी जैनपाठ शानामें उड़ा भारी मान व इनाम मिला था ।

जयपुरमें मानमन नामक एक जेनी था । उसके प्यारेलाल नामका ८ वर्षका एक सुशील लडका था बालकपनसे ही प्यारेलालम उत्तम उत्तम गुण लेगये थे । परन्तु उदारता गुण मरसे प्राप्त न था । किसीका भला होता हो तो उस कार्यमें प्यारेलाल हमेशह आगे हाकर सहायता करता था । इतना ही नहीं किन्तु किसी दूसरेकी भलाई करनेम अपना हानि हो तो भी वह अपनी हानिकी कुछ भी परवाह नहीं करर दूसरेकी भलाई करनेमें तत्पर रहता था ।

† जिनमदिर, जिनप्रतिमा, जिनमाणी (जैनशास्त्र) जिमधर्म, अरहन्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु ये नव देवता हैं ।

एक दिन उसके दरपर यानमनका अतिमनेही मिय पाहुना आया था । उसने चोर लोकोस प्यारेनालकी बहुत कुछ प्रशंसा मुन रखी थी । उसके साथ २ यह भी सुना था कि प्यारेनाल म उदारता गण समे प्रकार है । इस कारण उस पाहुनेने प्यारेनालके उदारतागुणकी पगीता लेनका प्रियाग करके प्यारेनालस कहा कि प्यारेनाल ! तुम क्या पढ़ते हो ?

प्यारेनाल—काकाजी ! मैं जैनगानबोधक पहिला भाग पढ़ता हूँ ।

पाहुना—तरी कताम (क्लाममें) कितने विद्यार्थी हैं ?

प्यारेनाल—मेरी कताम पचीस लडके पढ़ते हैं ।

पाहुना—उन सब लडकोंमें अन्धे लडके कितने और खराब कितने ह ।

प्यारेनाल—काकाजी ! इस पढ़नका उत्तर मैं किमी प्रकार नहीं दे सकता ।

पाहुना—अन्ध प्यारेनाल ! आज मैं तुम्हे २५ पुस्तक देता हूँ मो तू अपनी कतामे सब लडकोंको एक एक पुस्तक दे देना परन्तु इनमें एक पुस्तक कुछ फटी हुई तथा मैली है सो क्लामे जो लडका उससे अखीरमें रहता है उस लडकेको दे देना ।

प्यारेनाल—जो आज्ञा ।

इसके पश्चात् प्यारेनाल पाठशालामें २५ पुस्तकें लेकर गया और उस पाहुनकी सब बात गुरुजीको ज्योंकी त्यों कह मुनाई । तब अ प्रापक पत्राशयन कर कि ये पुस्तकें तू लाया है सो तू ही अपन हाथमें विद्यार्थियोंको पाठ दे । तब गुरुकी आज्ञानुसार अपने ही सब विद्यार्थियोंको एक एक पुस्तक बाटनी परन्तु

जो पुस्तक मैली आर फटी हुई थी, वह अपनेलिये रक्खी । यह देव अभ्यापकजीने कहा कि प्यारेलाल तूने खराब पुस्तक क्यों रक्खी, तू तो सबसे प्रथम रहता है । प्यारेलालने कहा कि—दूसरेको खराब पुस्तक देकर अपने आप अच्छी रक्खना यह अन्याय कहा जायगा क्योंकि दूसरेको ऐसी खराब पुस्तक देनेमे उसके मनमें दुःख होगा इस कारण खराब पुस्तक अपने अपने अपने ही उचित समझकर मैंने यह पुस्तक अपने लिये रक्खी है । यह बात सुनकर अभ्यापक महाशय बड़े प्रसन्न हुये । सब लडकाके सामने अभ्यापकजीने प्यारेलालके इस उदारभावकी बहुत प्रशंसा करके सबको प्यारेलालकी तरह उदारता गुण धारण करनेको प्रेरणा की । जब यह बात प्यारेलालके घर पाहुनेने सनी ती उसने खुश होकर प्यारेलालकी बहुतसी प्रशंसा करके प्यारेलालको पांच पुस्तकें इनाम दीं ।

छठा पाठ ।

जिनवाणी माताकी स्तुति ।

सर्पैया मत्तगयद ।

पीरडिमात्रत निरुरी, गुरु गोतमके मुखकु ड ढरो ह ।
 मोहमहाचल भेद चली, जगकी जगतातप दूर करो ह ॥
 ज्ञानपयोनिधिमाहि रलो, उहु भग तर गनिसों उठरी है ।
 ना सुचि शारदगगनदोप्रति, मै अजुलि कमि शीस धरी है ॥१॥
 या जग मन्दिरमे अनिवार, अज्ञान अन्धेर उयो अति भारी ।
 श्रीजिनकी धुनि दीप शिखासम, जो नहि होत प्रकाशनदारी ॥
 तो किस भाति पदारथपाति, कहां लहते ! रहते अविचारी ।

या विधि सत कई धनि हैं धनि है जिनवन रड उपकारी॥७॥
दोहा ।

जिनवानीक ज्ञाननें सूक्तहि लोक अलोक ।

मा वानी मस्तक थलो, सदा देत हू राक ॥ १ ॥

मदिरजीमें कहीं भी शास्त्रजी धरत हों अथवा जहा जिन
आनमारी वा खिडकीमें शास्त्रजी पिराजमान हों, उनक सामन
ऊपर लिखी स्तुति पोलकर हाथ जोडकर नमस्कार करना
चाहिये ।

सातवा पाठ ।

नीरोगता ।

नीरोगता (तंद्रुस्ती) ममस्व सुखोंका मूल (जड) है ।
नीरोगताके समान ससाममें सुखका माधन और कोड नहीं है ।
क्योंकि शरीर निराग रहनेमें ही मनुष्य ससारक समस्त सुखों
केनिये नानाप्रकारके उद्योग वा उपाय कर सकता है । रोगी
मनुष्य ऐसा दुखी और उदास रहता है कि उसे पत्न बगैरह
किसी भी कामके करनमें उत्साह नहीं होना । अतएव मनुष्यको
रोगोंसे सदा दूरही रहना चाहिये । अर्थात् अपना खान पान
रहन सहन ऐसा रखना चाहिये जिससे कोई भी रोग उत्पन्न न
हो । क्योंकि जब किसीका कोई रोग होता है तो वह उसीके
खानपान व रहन सहन बिगाडस ही जाता है । यदि मनुष्य
अपना खान पान और रहन सहन ठीक ठीक रखे तो कभी भी
रोगोंके फदेमें न फसे । यहा कुछ ऐसे उपाय बताये जाते है कि
जिनके अनुसार धरताप करते रहनेमें मनुष्य रोगोंसे बचकर
नीरोगताको प्राप्त कर सकता है ।

नीरोगता प्राप्त करनेकेलिये प्रथम तो स्नान करनेकी वडो आवश्यकता है। स्नान करनेसे शरीरका मैल धुल जाता है और मैला रहनेके कारण शरीरमेंसे जा दुग्ध निकलना करती है, वह नष्ट हो जाती है। जो लोग नित्य स्नान करते है उनका शरीर निर्मल और नीरोग रहता है। जो लोग कई कई दिन तक स्नान नहीं करते उनके शरीरमें दुग्ध आन लगती है और उनको खुलकर भूख नहि लगती तथा दस्त भी साफ नहि आता जिससे वे रोगी हो जाते हैं।

दूसरे—प्रतिदिन थोडा बहुत व्यायाम (सरत) करना भी आवश्यकीय कार्य है क्योंकि व्यायाम करनेमें शरीर हृष्टपुष्ट और निरोग रहता है। दस्त खुलासा आता है। अस्नानय दृष्ट पेनना सुदूर फिराना, थोडपर चढकर दोडाना, गेंद फुटयान खेनना आदि जिसप्रकार शरीरकी हलनचलन क्रिया है, ऐमा व्यायाम नित्य करत रहना इसके सिवाय प्रात काल और सायकान खुले मैदानमें भ्रमण करना भी एक प्रकारका व्यायाम है। जो लोग थोडा बहुत भी व्यायाम नहीं करते यों ही घरपर सुस्त पड रहते हैं उनका शरीर निर्मल हो जाता है और शीघ्र ही रोगी हो जाते हैं।

तीसरे—शरीर निरोग रखनेकेलिये भोजनकी शुद्धि रखना चाहिये, सडा मासा, या सूखा भाजन करना शरीरको बडा हानिकारक है। दूसरे खात समय जल्दी २ नहीं खाना चाहिये। जल्दी भाजन करनेसे भोजन उडी देरमें पचता है, प्रजार्ण हो जाता है। भोजन पचे त्रिना ही भोजन करनेका दूसरा समय आजाता है तो भ्रजीणपर फिर भोजनकर लेना पडता है जिससे

पेटमें पीडा अपरक दस्त वगैरह अनेक दुखदाई रोग हो जाते हैं । पानी भी निर्मल दोहरे गाँवक छत्रसे छानकर पीना चाहिये ।

चाथे—नोरोग रहनेकनिये रहनेका स्थान ऐसा होना चाहिये जिसमें शुद्ध वायु और प्रकाश अच्छी तरह आता जाता हो । जिन स्थान या कमरेमें सदा अंधेरा रहता है और वायु तथा मूषकी किरणें नहीं आती, नीयारें तथा आगन सीना रहता है उस स्थानको रोगका घर समझना चाहिये । उस स्थानमें रहनेसे शरीरका स्वास्थ्य बहुत जल्दी बिगड़ जाता है । बहुत जल्दी रोगी हो जाते हैं ।

हे बालका ! यदि तूमें निराग रहकर सुखी रहना चाहते हो तो ऊपर लिखे उपायोंक अनुपार अपना बतान कर । खाने पीनेको वस्तुमें भी बहुतही हानिकारक हानो ह सो तुम्हारे माना पिता जिस २ चीजक खानेकनिये तथा अन्निक खानेकनिये मनाइ करे उसको कदापि मत खाया करो ।

आठवा पाठ ।

आठवके बारह व्रतके नाम ।

पाच अणुव्रत तीन गुणव्रत और चार सिनाव्रत इसप्रकार आठवके बारह व्रत कहे गये हैं ।

जिनमेंसे हिंसादिक पांच पाप णरुदेश (यथाशक्ति) त्याग किये जाय, उनका अणुव्रत कहत हैं । जस—अहिंसाणुव्रत १, सत्याणुव्रत २, अचौयाणुव्रत ३, व्रतयाणुव्रत ४, परिग्रहण रिपाणाणुव्रत ५ इसप्रकार पाच अणुव्रत हैं ।

जिन प्रतीसे श्रावकके आठ मूलगुण हाँड़का प्राप्त हो उन्हें गुणव्रत कहते हैं । दिग्प्रत १, अनर्थदडव्रत २, और भागापभाग परिमाणव्रत ३, ये तीन गुणव्रत कहलाते हैं ।

जिन प्रतीमें मुनिके पाँच महाव्रत वगैरहको शिक्षा मिलती रहै उनको शिक्षाव्रत कहते हैं, २ शिक्षाव्रत चार हैं दशावकाशिक १ सामायिक २, प्रपद्योपवास ३, और अतिथिसुविभाग (दान) ४ ।

चारहप्रतीक पाँच पाँच अतीचार हैं । उन 'अतीचारोंको टालकर इन चारहप्रतीको धारण करनेसे वास्तविक श्रावक हाँ-सकता है । उसको श्रावककी ग्यारह प्रतिमात्रोंमेंसे दूसरी प्रतिमाका धारी प्रती श्रावक कहते हैं अर्थात् वह श्रावकके ग्यारह दर्जोंमेंसे दूसरे दर्जका श्रावक कहलाता है ।

जा लोग चारहप्रतीको अतीचाररहित नहीं पालते, कमसे कम पाँच अणुव्रतीमेंसे इनके एक भी अणुव्रत नहीं है अर्थात् हिंसा, चोरी, मूठ, कुशील और परिग्रहमेंसे एक भी पाप जिसने एकदश नहीं छोड़ा है वह श्रावक नहीं कहना सकता और जो मनुष्य कमसेकम पाँच अणुव्रतीको निरतिचार पालता है वह अगरेज सरकारके तानोरातहिंद (इण्डियन पिनलकाट) के लिये हुये ५४० प्रकारके अपराधोंमेंसे किसी भी अपराधमें नहीं आसकता क्योंकि ये ५४० अपराध इन हिंसादि पाँच पापोंके ही भेद हैं और इन्हीं कारण मनुष्य उन अपराधोंका करते हैं ।

इन चारह प्रतीक वा कमसे कम पाँच अणुव्रतीके धारण करनेवाले इस लोकमें कीर्ति सुख प्रतिष्ठाका प्राप्त होकर परलो-कमें आनंद सुखी होते हैं । इस कारण जैनीमानको बालकपनसे ही इन पाँच पापोंके त्याग करनेका अभ्यास बढ़ाना चाहिए और

पाच पापाक त्याग करनेक पश्चात् तीन गुणावत तथा चार शिक्षा प्रतीको धारण करक सच्चा श्रावक बनकर जनधर्म की महिमा (प्रभासना) बढ़ाना चाहिये ।

नवमा पाठ ।

लकडहारा और उसका कुहाडा ।

एक लकडहारा नदीके किनारेपर कुहाडसे लकडिय काटता था । देवयागस दृष्टसे कुहाडा निकलकर उस नदीमें गिर पडा । नदीमें पानी बहुत था जिससे वह नदीमेंसे अपना कुहाडा निकालनेमें असमर्थ था । लाचार वह गरीब लकडहारा नदीके किनारेपर बैठकर रान लगा । इतनहीमें उस जगहका क्षत्रपाल देव मनुष्य रूपमें बहा आया तो उसने लकडहारेपर दया करके तदीमसे उसका कुहाडा निकालनेके लिए डुबकी लगाई और लकडहारे की परीक्षाके लिये एक सोनका कुहाडा दिखाकर वह देव राना कि—“तेरा यही कुहाडा है” तब लकडहारेने देखकर कहा कि नहीं मेरा यह कुहाडा नहीं है । तब देवने दूसरायार डुबकी लगाकर एक चादीका कुहाडा लाकर कहा कि—“तुम्हारा यह कुहाडा है” तब लकडहारेने कहा कि यह कुहाडा भी मेरा नहीं है । तब तीसरी बार देवने जन्में डुबकी लगाकर लोहेका असली कुहाडा लाकर कहा कि सो तूरा यह कुहाडा है ? तब लकडहारेने मसन होकर कहा कि—हां मेरा कुहाडा यही है । इसप्रकार उस लकडहारेकी निर्लभता और सचार्थको देखकर वह देव बहुत ही मसज हुआ और कुहाडके सिवाय वह सोन और चादी का कुहाडा भी उस लकडहारेको इनामके रतार न दिया ।

लोभ करना बड़ा पाप है । लोभ पापका माप है इसलिये लोभ (लानच) कदापि नहीं करना चाहिये । देखो लकड़हारेने सोने और चादीके कुहाड़े का लोभ नहीं किया तो वे दोनों ही कुहाड़े उस देवने प्रसन्न होकर दे दिये । यदि वह लकड़हारा लोभमें आकर सोनेके कुहाड़ेको अपना कुहाड़ा कह देता तो वह देव उसे झूठा समझकर उल्टा दंड देता और उसका लोहे का कुन्हाड़ा भी उसे नहीं मिनता, इसकारण लोभ न करके जो कुछ ग्याना पहरना मिले, उसीमें सतुष्ट रहना चाहिये ।

दशवां पाठ ।

गुरु स्तुति ।

बर्दों दिगंबर गुरुचरन जग,—तरन तारन जान ।
 जे भरम भारी रोगको, हैं राजबेध महान ॥
 जिनके अनुग्रह जिन कभी, नहीं कठै कर्मजजीर ।
 ते साधु मेरे उर बसहु, पेरी हरहु पातकपीर । १ ॥
 यह तन अपावन अधिर है, ससार सकल अमार ।
 ये भोग विष पकवानसे, इहभाति सोच विचार ॥
 तपविरचि श्रीमुनि बन बसे, सब छार परिगह भीर ।
 ते साधु मेरे मन बसो, पेरी हरहु पातक पीर ॥ २ ॥
 जे कांच कचन सय गिनहिं, अरि मित्र एक स्वरूप ।
 निंदा बडाई साखिनी, (१) मनखड, शहर अनूप ॥
 सुख दु ख जीवन मरनमें, नहीं खुशी नहीं दिलगीर ।
 ते साधु मेरे मन बसो, पेरी हरहु पातक पीर ॥ ३ ॥

जे वाह्य परवन बन बसे, गिरिगुफा महन पनाग ।
 सिल सेज समता महारी, शशिकिरन द्वीपक जोग ॥
 मृग पित्र, भोजन तपमई, विज्ञान निमज नीर ।
 ते साधु घेर मन बसो, घेरी हरहु पातक पीर ॥ ३ ॥
 मुखहि सरोवर जन भर, मुखहि तरगिनि-नोय (१) ।
 वाटहि (२) घणेठी (३) ना चन, जई ताम गरभी होष ॥
 तिह कान मुनिवर तप तपहि, गिरिशिखर दाट धीर ।
 ते साधु घेर मन बसो, घेरी हरहु पातक पीर ॥ ५ ॥
 घन घोर गरजहि घन घटा, नभ परहि पावस (४) कान ।
 चहु ओर चमके बीजुरी, अति चर सीरी व्याम (५)
 तरुदेठ (६) तिष्ठहि तत्र जी, एकात अघन शरीर ।
 ते साधु घेर मन बसो, घेरी हरहु पातक पीर ॥ ६ ॥
 जत्र शीतमास तुपारसो, दाह सकन उनराय ।
 जत्र जमे पानी पाखर्रा, (७) यरहर सबकी काय ॥
 तत्र नगर निवर्स चौहरे, (८) अथवा नदीक तीर ।
 ते साधु घेर उर बसो, घेरी हरहु पातक पीर ॥ ७ ॥
 कर जोर 'भूधर' धीनये, कच पित्रहि रे मुनिराज ।
 यह आश मनकी कच फले, घेर सरहि मगर काज ॥
 ससार विषय विदेशमें, जे जिना कारण वीर ।
 ते साधु घेर बर बसो, घेरी हरहु पातक पीर ॥ ८ ॥

१ नदीका जल । २ रास्तेमें । ३ राग्नागीर, मुसाफिर । ४ बरसानमें
 ५ ठडी पत्र । ६ वृक्षके नीचे । ७ तालाजोंमें । ८ चौपट
 मैदानमें ।

ग्यारहवां पाठ ।

जीव अजीव ।

शिष्य—क्यों गुरुजी पहराज । जीव अजीव किसको कहते हैं ?

गुरु—जो चले फिरे जानै उसको जीव कहते हैं और चले फिरे जान नहो, जहाका तहा पडा रहे, ऐसे अचेत पदार्थको अजीव कहते हैं ।

शिष्य—पृथ्वी, पहाड, वृक्ष, अग्नि, हवा, पानी ये जीव हैं कि अजीव ह ।

गुरु—ये सब जीव हैं ।

शिष्य—आपने कहा था कि जो चले फिरे सो जीव है सो पृथ्वी पहाड वृक्ष वगैरह कहा चलते फिरते हैं ?

गुरु—भाई जीव दो प्रकारक है । एक जम और एक स्थावर । जो चले फिरे ऐसे इन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पंचेन्द्रिय ये तो जस कहलाते हैं और पृथ्वी, जल, अग्नि, हवा, वनस्पति ये पांच प्रकारक एकेंद्रियजीव हैं । इनमें एकेंद्रिय होनेसे ये चल फिर नहि सकते पर तु ये जानते जरूर है अर्थात् इनको ज्ञान अवश्य है, इसनिये ये भी जाव है ।

शिष्य—इन्द्रिय किसको कहते हैं ।

गुरु—जिसके द्वारा जीवको ज्ञान हो, उसे इन्द्रिय कहते हैं ।

शिष्य—इन्द्रिया कितनी हैं और कौन २ सी हैं ।

गुरु—इन्द्रिया पांच हैं स्पर्शन (चमडा) रसना (जीभ) । घ्राण (नास) चक्षु (नेत्र) श्रोत्र (कान) ।

शिष्य—इन पांचों इन्द्रियोंसे पृथिवी जल अग्नि हवा और वनस्पति इनके कौनसी एक इन्द्रिय होती है ।

गुरु—इन सबके एक स्पर्शन इन्द्रिय होती है। ये सब जीव ठंडी गम दवा, घृष, छाह अथवा अन्य पदार्थ शरीरपर लगनेमें अर्थात् चमड़े पर स्पर्श होनेसे (छूए जानेसे) जान जाते हैं कि यह ठंड या गर्म पदार्थ लगा।

शिष्य—लट (गिडार) केंचुएके कितनी इन्द्रियें होती हैं।

गुरु—ये सब द्वौद्रिय जीव हैं। इनके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां होती हैं।

शिष्य—तीन इन्द्रिय किनके होती हैं।

गुरु—चिंवटी, ईंली, घुण वगैरह जीवोंके स्पर्शन, रसना, घ्राण ये तीन इन्द्रियां होती हैं। इसकारण इनको त्रैन्द्रिय जीव कहते हैं।

शिष्य—मखली, ततईया, मोंरा वगैरह केंद्रिय जीव हैं।

गुरु—इनके स्पर्शन रसना घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रियां होती हैं, इसकारण इनको चौद्रिय जीव कहते हैं।

शिष्य—और पंचेन्द्रिय जीव कौन २ से होते हैं।

गुरु—मनुष्य, देव, नारका और गाय, बैल, घोड़ा, हाथी, चिड़ी, कौवा, कबूतर वगैरह तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। इनके सब इन्द्रियां होती हैं।

शिष्य—गुरुजी ! जीव और इन्द्रियें तो समझीं परंतु अजीव पदार्थ कौन २ से हैं।

गुरु—जिन पदार्थोंमें ऊपर लिखी पांचों इन्द्रियोंमेंसे एक भी इन्द्रिय नहीं हो, ऐसी सूकी मिट्टी पत्थर, ईंट, चूना, मूका लकड़, कोयला वगैरह सब अजीव पदार्थ हैं।

शिष्य—गहुत ठीक है। इन जीव अजीवके विषयमें और भी

बहुतसा पृछना है पर तु इतना अच्छे तरहसे याद करके फिर कभी पृछूंगा ।

गुरु-तथास्तु ।

वारहवां पाठ ।

अहिंसाणुवत ।

क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष वगैरह पद्रह(१)प्रकारके प्रमादोंमेंसे किसी भी प्रमादके वश होकर अपने वा परके प्राण नष्ट करनेको हिंसा कहते हैं और इस प्रकारकी हिंसाके सर्वथा त्याग करनेको अहिंसाव्रत कहते हैं । पर तु द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, और पंचेन्द्रिय, इन त्रस जीवोंकी (चलते फिरते जगम जीवोंकी हिंसाके यथाशक्ति त्याग करनेको ही अहिंसाणुव्रत कहते हैं । थोड़े वा यथाशक्ति त्याग करनेका नाम अणुव्रत है । जिसको एकदेश त्याग भी कहते हैं । एकेंद्रियादिक समस्त प्रकारक जीवोंकी हिंसा का सर्वथा त्याग करना है सो तो मुनिका महाव्रत है अर्थात् मुनियोंके पूण अहिंसाणुव्रत होता है और गृहस्थोंके एक देशत्यागरूप अहिंसाव्रत अर्थात् अहिंसाणुव्रत होता है ।

जिनव्रतमें त्रसहिंसा चार प्रकारकी मानी गई है । जैसे— सकल्पीहिंसा १, और भी हिंसा २, उद्यमीहिंसा ३, और विरोधी हिंसा ४ ।

१ । अपने चित्तसे चाहकर किसी जीवको मारने या पीडित करनेको सकल्पीहिंसा कहते हैं ।

१ पाचइन्द्रियोंके पाच विषय, क्रोध मान माया लोभ ये चार कथाय, छोकथा, चोरकथा, राज्यकथा और भोजनकथा ये चार त्रिकथायें एक-रागद्वेष और एक निद्रा ये सत्र पद्रह प्रमाद हैं ।

२। गृहस्थके घर जो किसी वस्तु कूटने, पीसने, रसोई बनाने, बुहारी देने आदि कार्योंमें (भारभोंमें) प्रमादरहित होकर यत्नाचारसे प्रवर्त्तनेपर भी चिंवट्टी बगैरह अनेक जीवोंकी हिंसा होती है उसको भार भीहिंसा कहते हैं ।

३। अन्नके कोठे भरने, अन्नादिक पदार्थ खरीदने, घेचने, खेती करने, कनकारखाने खोलने आदि रोजगार करनेमें जो हिंसा होती है, उसको उद्यपीहिंसा कहते हैं ।

४। और राजा महाराजाओंको प्रजाकी रक्षा करनेकेलिये अथवा देशमें शांति स्थापन करनेकेलिये शत्रुकी सेनासे (फौजके साथ) युद्ध बगैरह करनेमें जो हिंसा होती है, उसको विरोधी हिंसा कहते हैं ।

इन चार प्रकारकी असहिंसाओंमेंसे गृहस्थ केवल सकल्पी हिंसाका त्याग कर सकता है । अन्य तीन हिंसाओंको यथाशक्ति त्याग करनेका गृहस्थोंकेलिये उपदेश है । इस कारण जिनको श्रावक बनना हो, उनको घन घचन काय और कृत कारित अनुमोदनासे सकल्पीहिंसाका त्याग तो अवश्य ही करना चाहिये और अन्य तीन प्रकारकी हिंसाओंका जिनसे जितना घन सके यथाशक्ति त्याग करना चाहिये अर्थात् जहातक घने प्रत्येक कार्यमें प्रमाद छोड़कर यत्नाचार पूरक अपनी प्रवृत्ति करना चाहिये ।

जो कोई अहिंसागुणव्रतका धारण करे, उसको किसी जीवको लाठी बगैरहसे मारना पीटना १, नाक बगैरह छेदन करना २, किसी प्रकारकी पीडा देना ३, अधिक भार लादना ४, और अन्न पानादिक रोकना वा अनपानादिक देनेमें श्रुति करना ५ आदि कार्य भी छोड़ देना चाहिये । इन कार्यों को छोड़ देनेसे ही निरतिचार (निर्दोष-निघ्न) अहिंसागुणव्रत पल सकता है ।

तेरहवा पाठ ।

मनसुख और धनसुख ।

मनसुख नामका एक ब्राह्मणका लडका था । वह हमेशह हाथमें छड़ी लियेहुये फिरा करता था । रास्तेमें गाय बल गधा घोडा बकरी कुत्ता बगेरह किसी भी पशु पत्नी बगेरह अन्य प्राणीको देखता तो उसे अपनी छड़ीसे अवश्य ही एक दो बार मार दिया करता था । एक दिन इसीप्रकार एक कुत्ते को मारते हुए धनसुख नामके एक जैनीके लडकेने देखा तो उसने मनसुखसे कहा कि—भाई मनसुख ! तू यह क्या करना है ? मनसुखने कहा कि—तुझे इससे क्या मतलब ? मेरे मनमें आता है सो करताहू । धनसुखने कहा कि भाई मनसुखलान ! जरा विचार करके देख कि—इसप्रकारका पापकार्य करना तुझ सरीखे समझदारको क्या अच्छा लगता है ? मनसुखने कहा कि भाई धनसुख इसमें पापका क्या काम है ? तब धनसुखने कहा कि—भाई मनसुख तू यह छड़ी मेरे हाथमें दे और मैं इस उडीसे तुझे मारू तो तुझे कसी नगे ? तब मनसुखने कहा कि मेरे मारेगा तो मुझे बहुत ही बुरी लगेगी । तब धनसुखन कहा कि जब तुझे बुरी लगेगी तो इस कुत्ते को तूने मारा सा इसको क्यों न बुरी लगेगी ? भाई मनसुख जिसप्रकार अपना जीव अपनका प्यारा लगता है, इसीप्रकार कुत्ता बकरी गाय बेल बगेरहको भी प्यारा लगता है । इनको मारनेसे हमारी तरह इनको भी बडा भारी दु ख हाता है । इसकारण किसी भी जीवको दु ख देना पीडा पहु चाना कदापि उचित नहीं है । दूसरेको दुख देनेसे हिंसा नामका बडा भारी पाप लगता है । तब मनसुखने कहा कि—भाई धनसुख नेने

इस कहनेस अर मुझे भले प्रकार मालूम हो गया कि—जिसप्रकार मारनेसे अपनेको दुःख होता व उसीप्रकार सब जीवोंको दुःख होता है । क्यों भाई धनसुख ! तुझे यह बात किसने समझायी ? तब धनसुखने कहा कि भाई मनसुख मे जैनीका लडका हू । हमारे जनमतम जीवदया पानन करनेपर बहुत कुछ उपदेश लिखा है सो मैं अपने यहा मदिरजीमें शास्त्र सुननेको जाता हू तो ये सब बातें सुननेमें आती है । हमारे यहां ऐसा लिखा है कि—किसी भी जीवको न तो आप मारे अथवा किसीप्रकारकी पीडा दे और न दूसरेको कहकर किसी जीवको मरवावे और कोई दुष्ट किसी जीवको मारता हा तो उसकी मरसा नहिं करे । इसप्रकार मन वचन कापसे कृत कारित अनुपादनारूप हिंसा करनको जिनेंद्र भगवानन सखत मनाही की है । मनसुखने कहा कि बहुत ठीक, अस मे किसी जीवको न तो मारूंगा और न किसीप्रकारकी पीडा दूंगा ।

साराश—यह है कि धनसुखकी तरह हरएक जनीक लडकको अपने मनम दयाभाव रखना चाहिये और मनसुखकी तरह दूसरेके कहनेस अपनी खागे आदते छोड दना चाहिये ।

चौदहवा पाठ ।

धारहभावना

१ अनित्यभावना ।

दोहा ।

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके अम्बार ।

मरना सबको एकदिन, अपनी अपनी धार ॥ १ ॥

२ । असरनभाषना ।

दलपल देई देवता, मातपिता परिवार ।
परतीविरिया जीवको, कोड न राखनहार ॥२॥

३ । ससारभाषना ।

दामपिना निरधन दु खी, तृष्णावश धनवान ।
कहू न सुख ससारमें सत्र जग देख्यो छान ॥ ३ ॥

४ । एकत्वभाषना

आप अक्लो अवतरें, मरें अकेलो होय ।
यों कबहू या जीवको, साथी सगो न कोय ॥ ४ ॥

५ । अन्यत्वभाषना ।

जहा देह अपनी नहीं, तहा न अपनो कोय ।
पर सपति पर प्रगट ये, पर है परिजन लोय ॥ ५ ॥

६ । अशुचित्यभाषना ।

दिपे चामचादरमही, हाड पीजरा देह ।
भीतर यासम जगतमें, और नहीं धिनगेह ॥ ६ ॥

७ । आस्त्रभाषना । सारठा ।

मोह नोदके जोर, जगवासी तूम सदा ।
कमचोर चहु ओर, सरबस लूटे सुनि नहीं ॥ ७ ॥

८ । सधरभावना

सतगुरु देय जगाय, मोहनीद जब उपसमै ।
तत्र कछु बने उपाय, कर्म चोर भावत रुकै ॥ ८ ॥

निजराभाषना । दोहा ।

ज्ञानदीप तप तेलभर, घर शोधै भ्रम छोर ।
याबिध विन त्रिकस नहीं, पीठे परत चोर ॥ ९ ॥

पचमहाव्रत सचरन, समिति पचपरकार ।

प्रयत्न पच इ द्वियविजय, धार निरजरा सार ॥ १० ॥

१० । लोषभायना ।

चौदह राजु उतग नभ, लोक पुरुपसठान ।

ताम जीव अनादिते, भरमत हें विन ज्ञान ॥ ११ ॥

११ । बोधिदुर्लभायना ।

धन का कचन राजसख, सबहि सुन्नभकर जान ।

दुनभहें ससारम, एक जथारथ ज्ञान ॥ १२ ॥

१२ । धमभावना

जाचे सुरतरु देय सुख, चितत चिता रैन ।

विन जाचे विन चितये, धर्म सकल सुरदेन ॥ १३ ॥

पढहवा पाठ ।

सत्याणुव्रत ।

आठव पाठमें जो चारह व्रतोंक नाम उताये गये हैं, उनमें दूसरा सत्याणुव्रत भी है । लौकिकमें सत्य जैसाका तेसा कहनेको कहते हैं परंतु कहीं कहीं जैसाका तेसा कहनेमें बड़ी हानि हो जाती है । हमारे यहा सत्यका लक्षण प्रमादरहित वचन बोलना किया है सो ठीक है । अर्थात् प्रमादक वश जो वचन कहे जाते हैं वे सब असत्य होते हैं । असत्यका उलटा अर्थात् प्रमादरहित वचन कहना सा सत्य है । असत्यका यथाशक्ति त्याग करना अर्थात् स्थूल असत्यका त्याग करना सो सत्याणुव्रत है । इस व्रतके धारण करनेवालोंको अप्रियवचन, कठोर वचन, भयकारक वचन, और मिथ्या उपदेश देना, किसीकी गुप्त बात

को निंदाक साथ मगट करना, झूठी बातें लिखना, धरोहरको हरलेनेका वचन कहना चुगली वा निंदा करना वगैरह वचन भी नहीं कहना चाहिये । इसप्रकारके अतीचार छोड देनेमे निरति चार सत्याणुवन पल सकता है ।

इस व्रतके पालनेमे परलोकम (स्वर्गादिकमें) सुख होनेके सिवाय इसलोकमें भी सुख यश और प्रतिष्ठाकी प्राप्ति होती है । तथा सत्यवादीके वचनोंको सब कोई मानते हैं । सत्यवादीका धदा रोजगार भी खुब चन्ता है । इस कारण हे बालको ! तुम आजसे झूठ बोलना डाडदो । कोई तुमको लालच देकर झूठ बुलावे तो भी तुम कदापि झूठ मत बोलो । तुम्हारा झूठ बोलना जनम और जेनजातिको महाकलक लगाना है ।

सोलहवां पाठ ।

सत्यवादी बालक ।

स्वरूपचन्द्र नामका एक लडका था । उसकी उमर ८ वर्षकी थी । एकदिन दोपहरके समय खेलनेके पश्चात् घर आकर दियेनी पर गाल रखकर अतिशय चिंतामं मग्न हुआ बैठा था । इसको किमी प्रकारका रोग हुआ होगा, ऐसा समझकर पूछा गया तो उसने रुदा कि मुझे कुछ भी नहीं हुआ, परतु एकातमें बैठा हुआ दीर्घनि श्वास डालने लगा । सामको कुछ भी नहीं खाया और माताक कमरेके पासकी कोठरीम जा सोया ।

उसने सोनेके एक घंटे बाद उसकी दासीने कोठरीमें जाकर देखा, तो वह लडका विडौनेपर मछनीकी तरह छटपटा रहा है । दासीने भयचक्रित हो पूजा कि लह्या ! तम इसप्रकार

क्यों करने हो ? लडकने कहा कि तू माको बुना ला, उसक पास जचतक यँ अपने दु खकी बात न कहू गा तयतक मै किसी प्रकार नहि बच सकता ।

दासी यह बात सुनकर घबराहटके साथ उसकी माक पास गई और यह बात कही तो उसकी माता त्वरित ही अपने मिय पुत्रके निकट आई । स्वरूपच इ अपनी माताको देखते ही गलेमें हाथ डालकर अश्रुजलस माताका हृदय सींचने लगा अर्थात् रान लगा । माताने बार बार दु खकी बात पूठी, तो बहुत डेरके बाद उमन गदगद स्वरसे कहा कि—मा ! मुझे क्षमा करना, आज मैं न दुष्ट जानककी तरह एक बहुत खराब काम किया है अर्थात् मैं एक मिथ्या रचन कहा ह, यह मैं ने तुम्हम भी छुपा रक्खा म । मैं ने अपने मित्रोंक साथ खेपते समय एक असत्य वचन कह कर डँडे जीत लिया और उस जीतके लिये मैं न यह बात सर्वथा छुपा रक्खी । मै भलेप्रकार जानता हू कि भूठ रीनना बडा पाप है । मुझे परलोकमें इसका बहुत बुरा फल भीगना पडगा । इसके सिवाय यह बात प्रगट हो जायगी, तो सब कोई मुझे मिथ्यावादी (भूठा) समझ घृणा करेगे, इसी बातको विचारनेसे घेरा मन अनिश्चय व्याकुल हो गया है, और इसी कारण मैं ने तुम्हे बुलाया है, कदाचित् तेरे पास मनका दु ख कहनेमें कुउ कल (चीन) पड जाय ।

इसके उत्तरम स्वरूपच द्रुकी माताने कहा कि बेटे ! जो कोई किये हुए अपराधको स्वीकार करवे उसके लिये पश्चात्ताप करते हैं और भविष्यतम अपनेको उन अपराधोंसे दूर रखनेकेलिये हृदप्रतिज्ञ होते हैं, उनका अपराध सब जगह माफ होता है । यदि

तुम इसप्रकारका बुरा काम भविष्यतम नहिं करोगे और इस अपराधके लिये मित्रोंसे क्षमा प्रार्थना कर लोगे तो तुमपर सब लोग प्यार ही करे गे, एक बार अपराध करनेसे तुम बुरे नहिं कहला सकते ।

स्वरूपचद्र अपनी माताके इसप्रकार योग्य वचन सुनकर तत्काल ही स्वस्थ हो, सुखसे सोगया । दूसरे दिन शय्यासे उठ कर अपने मित्रोंके पास गया और अपने उस अपराधको भगट करके क्षमा प्रार्थना की तो सब जने क्षमा करके उसकी प्रशंसा करने लगे । उस दिनसे फिर कभी स्वरूपचद्रने मिव्याभाषण नहिं किया ।

हे बालको ! जगतमें कोई भी मनुष्य नहीं होगा जिससे कि किसीप्रकारका अपराध न बना हो । पर तु जो कोई अपराध करके स्वीकार कर लेते हैं और भविष्यतमे वैसा अपराध नहिं करनेकी दृढ प्रतिज्ञा कर लेते हैं, उनको उत्तमश्रणीका मनुष्य कहने हैं । सो तुमको भी स्वरूपचद्रके समान असत्यभाषणका त्यागकर सत्यभाषी बालक बनना चाहिये ।

सतरहवां पाठ ।

सत्यश्रादी चोर ।

किसी समय एक राजा अपने कारागृहको देखनेकेलिये गया था । वहा उसने चार कैदियोंको कामपर जाते हुये देखा और उनको खडा करके प्रत्येकसे बैदमें पढनेका कारण पूजा ।

एक कदीने कहा कि हजूर मैं न कोई अपराध नहिं किया, नोगोंने झूठी गवाही देकर मुझे फसा दिया हे । दूसरेने कहा कि, महाराज । मुझे हाकिमने दुश्मनीसे बैदमें डाल दिया हे ।

तीसरेने कहा कि इन्में मे किसी दूसरे अपराधीके बदलेमें पकड़ा गया हूँ इसप्रकार तीनों कैदियोंने अपना पनाबदो (फूटा) हात बंदकर राजासे छूटनकी प्रार्थना की । इनको कुछ भी उत्तर न दकर राजाने चौथे कमीसे पूजा कि—तुम किस अपराधसे कदम पड ? तब चौथे रुदन कहा कि—धर्मव्रतार महाराज ! मैंने अपन पडोसीके घरस रुपयोंकी थैलो चुरायो थो, मैं किस मु इसे क्षमा पांगू ।

राजाने प्रसन्न होकर जहलदारागाको हुक्म दिया कि, इस की बेडी काटकर छोड दो । इसने झूठ सोलकर अपना अपराध नहीं उदाया किंतु सत्य रुढ़कर अपना अपराध घटा दिया है ।

हे बालको ! दरयो सत्य सोलनेका केसा फल है तुम कदापि असत्य नहीं सोलना । असत्य वचन द्व प्रकारके होते ह ।

पहिला असत्य मौजूदको नहीं मौजूद कहना जैसे किसीने पूजा कि, गुनाबच द धरम है या नहीं, तो धरम हाते हुए भी पसा उत्तर दना कि 'नहीं है ।' दूसरा नहीं मौजूदको मौजूद कहना जैसे किसीने पूजा कि, गुनाबच द धरम है या नहीं ? तो इसरु उत्तरमें गुनाबच दक न हाते हुये भी रुढ़ दना कि 'है ।' तीसरा असत्य, औरका आर रुढ़ देना है । जैसे किसीने पूछा कि "इस परमे कानसा पशु उधा है । तो इसके उत्तरमें घोडेके होत हुए "बैल उधा है" ऐसा कह देना । चौथा—असत्य गहित वचन कहना है, जैसे चुगली करना, ठट्टे धाजी करना, ककश वचन कहना, वृथा बकराद करना, नीतिविरुद्ध वचन कहने, इत्यादि । पाचवा असत्य पाप वचन कहना है, जैसे किसी जीवको मारने, पीग्ने व तकलीफ देनेके वचन रुढ़ने, चौर्यवचन कहने व छल

कपटके वचन कहने । छठा असत्य-अप्रिय वचन कहना है, जैसे भयकारक, शोकदायक, पीडाकारी, लडाई करानेवाले वचन । इसप्रकारके असत्य वचन, क्रोध मान माया लोमादि कपायोंके वशीभूत होकर कदापि नहि कहने चाहिये ।

अठरहवां पाठ ।

डरपोक लडका ।

नेमिचद नामका एक लडका था । बालकपनसे ही डरपोक था । ज्योंज्यों वह बड़ी उमरका होने लगा त्यों त्यों उसका डर-पोकपन भी बढ़ने लगा और तो क्या वह दिनमें अकेला किसी जगह नहि रह सकता था, तब रात्रिमें तो फिर क्योंकर रह सकता । रात्रिमें कभी कभी तो वह अपनी जाया देखकर ही डरन लग जाता था । चोपासम जय विजलीकी गडगडाहट होनी थी, उस समय तो वह अत्यन्त घबडाकर रोने लग जाता था । कोई छोटा मोटा जानवर उसके देखनेमें आता अथवा उसके शरीरके छू जाता तो बड़े जोरसे रोने लगता था ।

नेमिचदके इसप्रकारके डरपोक स्वभावसे उसके माता पिता बगेरह सब दुःखित हो गये । वह जैनपाठशालाम अकेला नहि जा सकता था, इसकारण उसका पिता प्रतिदिन उसे पाठशालाम पहुँचा आता था और छुट्टीके समय लानेके लिये भी उसे जाना पडता था । तत्पश्चात् नेमिच दके पिताके प्रार्थना करनेपर पाठशालाके अध्यापक महाशयने नेमिच दके साथ एक अभयच द नामके लडकेको साथी बना दिया । अभयच दमें नामानुसार गुण था । एक दिन अभयच दने नेमिच दसे कहा—कि तू मेरे साथ हवा खानेको चने तौ मैं तुझे हिम्मत दे सकता हूँ ।

नेपिच द—हिम्मत क्या चीज है ? और वह अपने पास हो तो क्या काम आ सकती है ?

अभयच द—भाई नेपिच द ! यदि अपने पास हिम्मत रहे तो फिर अपन कभी किसीसे डर नहि सकते ।

नेपिच द—तब तो भाई मुझे हिम्मत अवश्य ही देना चाहिये क्योंकि मैं बड़ा भारी डरपोक हू ।

अभयच द—नेपिच द तू काहेसे डरता है ?

नेपिच द—मैं सबसे डरता हू ।

अभयच द—तू किसनिये डरता है ।

नेपिच द—मैं इसनिये डरता हू कि कोई मुझे किसी प्रकारकी हानि न करे ।

अभयच द—तो भाई ! अबसे तू अपने मनमें ऐसा विचार किया कर कि—मुझे कोई भी किसीप्रकारकी हानि नहि पहुँचा सकता । दूसरेके जिसप्रकार हाथ पाव हैं मेरे भी हाथ पाव हैं । दूसरेमें जैसी शक्ति है मेरेमें भी वैसी शक्ति है । इसप्रकार विचार करनेसे तेरे चित्तमें हिम्मत आ जायगी और उस हिम्मतके कारण तेरे शरीरमें ताकत भी आ जायगी, तब तू किसीसे भी नहि डरोगे ।

नेपिच द—तेरा कहना ठीक है ऐसा विचार करनेसे डर नहि लग सकता, अबसे मैं ऐसा ही करनेकी आदत (स्वभाव) डालूँगा ।

अभयच द—बस इसीका नाम हिम्मत या साहस है जिसमें यह हिम्मत होती है वह किसीसे भी भयभीत नहि होता जिसमें हिम्मत नहीं होती उसको तुच्छसे तुच्छ मनुष्य भी दबा लेता है

और उसको सब जने डरपोक नामरुद अथवा कायर कहकर उसकी हसी उड़ाते हैं। इसकारण हरएक लडकको अपने चित्तमें हिम्पन (साहस) रखना चाहिये ।

नेमीचन्द-अब मैं भजेप्रकार सप्रभा गया, अरसे मैं किसीसे भी नहीं डरूंगा ।

इसके पश्चात् नेमिचन्द अभयचन्दकी सगतिमें रहकर उससे भी अधिक साहसी (हिम्मतवाला) होगया । एकदिन एक ब्राह्मणका लडका नदीमें गिरकर डूब गया था, उस वक्त नेमिचन्दके सिवाय वहापर कोई भी नहीं था । नेमिचन्द देखते ही झटपट बिना कपडे खोले ही नदीमें कूदपडा और डुबकी लगाकर वही मुसकिलसे उस लडकेको जीता जागता निकाल लाया जिससे ग्रामके सब लोगोंने उसे धन्यवाद दिया और उस गांव के जमीदारकी तरफसे एक सोनेका तमगा भी इनाम में मिला ।

सार-मत्र ही लडकोंको साहसी बनना चाहिये । साहस ही सब सपदाओंकी प्राप्तिका एकमात्र कारण है । साहससे ही ऐनक मुनिकेसे कठिन व्रत, तप धारण कर सकता है ।

उन्नीसवां पाठ

मत्यके विषयमें बोधा ।

सांच बरोबर तप नहीं, झूठ बरोबर पाप ।

जाके हिरदे साच है, ताके हिरदे आप ॥ १ ॥

सत्य नावपर जो चढत, या भवसिंजु अपार ।

आप तरें अरु औरको, देवे पार उतार ॥ २ ॥

जहा सप तह धर्म है, जहा मन्य तह योग
 जहां मत्थ तह श्री रहन, जहां सन्य तह भाग ॥ ० ॥
 जो श्रावकता सुत कहै, नितप्रति सा गी जान ।
 मान प्रतिष्ठा पायकर, जगम होय विरघात ॥ १ ॥
 जगन भाँति सय कायप, सब रोनेका मान ।
 सर्वाँडि कर जन प्रेमते, सचिका गुण गान ॥ २ ॥
 एक साचकी श्रान्ति, लासनका व्यापार ।
 चनता है जगारम, यामे नाँडि जगार ॥ ३ ॥
 कृटेका जगम धरै, मान क'टि अपमान ।
 कृत घनक पापते, पाँडे दु त्र मदान् ॥ ४ ॥
 इहकारण सय जन सदा, योस्रो साँची वान ।
 सत्याणुप्रन धारकर, सुग्य भोगो दिनरात ॥ ५ ॥

बीसवा पाठ ।

आहार (भोजन)

समस्त जीवोंको आहारकी अत्यंत आवश्यकता रहती है क्योंकि बिना आहारके कोई जीव नहीं जी सकता । समस्त जीवोंको आहार प्रायः तैयार मिलता है परन्तु मनुष्योंको अपना भोजन स्वयं तैयार करना पड़ता है । मनुष्यके खानेकी वस्तुओंमें अनेक चीजें तो वनस्पतिसे पैदा होती हैं, जैसे फल, तरकारी, मिरच, मन्न धगेरह और बहुतसी चीजें गौ मूँस आदिसे प्राप्त होती हैं । जैसे घी दूध दही घगेरह । और बहुतसी चीजें जमीनसे प्राप्त होती हैं जैसे नमक गार धगेरह । शरीर निरोग रखने और पुष्ट पानेके लिये मनुष्योंको अच्छा पथ्य और पुष्टिकारक भोजन

करना चाहिये । परन्तु भोजन करने समय ६ यातों पर ध्यान अग्र्य ही रखना चाहिये ।

१। जो भोजन किया जाये वह थन्डी तरह पना हुआ होना चाहिये । कच्चा होनेसे बहुत देरमें हजम होता है और शरीरमें अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न कर देता है ।

२। भोजन पेट भरकर करना चाहिये । परन्तु भूखसे अधिक कदापि नहीं करना चाहिये । यदि भूखसे अधिक खाओगे तो अजीर्ण (बदहजमी) होनेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होवेंगे ।

३। जिना भूखके किसीके आग्रहसे कदापि भोजन मत करो क्योंकि अजीर्णता पर भोजन करना त्रिप खानेके समान है ।

४। एक ही बार बहुतसा भोजन नहीं करके भूख लगने पर कई बार थोडा थोडा भोजन करना लाभदायक है । क्योंकि इसप्रकार करनेसे कभी सुस्ती नहीं आती और पाचनशक्ति भी बढ़ती है । बहुतसे अजैनों दिनमें दश बजे भोजन करके फिर रातको ६ १० बजे भोजन करते हैं, सो ठीक नहीं करते हैं क्योंकि निरोग मनुष्यको भोजन कैसा ही गरिष्ठ क्यों न हो, ६ घंटेमे हजम हो जाता है इसलिये दिनको चार या पाच बजे भोजन अग्र्य करना चाहिये । रात्रिको भोजन करनेसे अनेक जीर्णकी हिंसाके अतिरिक्त भोजन करके सो जानेसे वह भले प्रकार नहीं पचता और अनेक रोगोंको उत्पन्न कर देता है, ऐसा वैद्यक शास्त्र और बडे २ डाक्टरोंका मत है ।

५। प्रतिदिन एक ही नियत समय पर भोजन करना चाहिये नित्यके समयको टालकर अथवा घंटे आध घंटे पहिले ही भोजन करनेसे बहुत हानि होती है, इसलिये नित्य नौपजेसे वाग्ह बजेने

पहिले २ निर्दिष्ट समय पर हा भोजन करना चाहिये । नौयजेसे पहिले भोजन वा दूध टडाइ चाट चगेरह वतले पदार्थ बर्मी तहि खाना पाना चाहिये ।

६ । सदा एवहा प्रकारका भोजन नहां करना चाहिये । ऊंसा अस्तु पलटना जाय, वैसे वैसे भोजन भा पलटने रटना चाहिये, तथा देश, उमर उद्यम और शरारके बन्वे अनुसार भी भोजन बदलत रटना चाहिये ।

डकीसवा पाठ

अचौर्याणुग्रत ।

आठवें, पाठमें जो पांच अणुग्रतोके नाम बताये गये हैं उनमें तासरा अचौर्याणुग्रत है । अचौर्य नाम चोरी नदीं करनेका वा चोरी के त्याग करनेका है । हमारे धर्मशास्त्रोंमें इसका स्वरूप इस प्रकार है कि—प्रमादके बश होकर मालिककी आज्ञा बिना किसीकी गिरा हुई (पडी हुई) रथपी हुई भूली हुई वा धरोहर (अमानत) रखी हुई वस्तुको ग्रहण करना वा उठाकर किसी दूसरको दे देना सो चारा है । चोरी नदीं करनेकी प्रतिज्ञाको अचौर्याणुग्रत कहत हैं । अचौर्याणुग्रत पालनेवालोंको चोरीका उपाय बनाना, चोरीका द्रव्य लेना, राजाके घर आदि (टैक्स वगैरह) नियमोंका उल्लंघन करना अधिक मिलकर चलाइना और नापने हीनाधिक रखना ये

उसका सब कोई विश्वास करता है, और उसका व्यापार बहुत बढ़ता है। ऐसे सबे व्यापारसे ही अटूट धनकी प्राप्ति होती है, धनसे समस्त इष्ट पदार्थोंकी प्राप्ति होती है। तथा धर्मसाधन करनेकी नानाप्रकारकी सामग्री मिल सकती है और धर्मसाधनसे इसलोक में सुख और परलोकमें स्वर्गादि शुभगति होती है।

यह अचौर्याणुग्रत मनुष्यका (आत्माका) एक धर्म है अर्थात् गुण है। इस गुणके न होनेसे यह मनुष्य पापी कहलाता है, इस कारण इस चोरी पापको छोड़कर अचौर्याणुग्रतको धारण करना चाहिये। लोभमें फसकर कदापि परधनकी वाछा नहीं करनी चाहिये।

वाईसवां पाठ ।

चोरीका फल ।

गगाराम नामका एक लडका प्रतिदिन पाठशालामें पढनेको जाया करता था। एक दिन वह पाठशालासे किसीका एक चाकू चुराकर अपने घर ले आया। इसपर उसकी माताने कुछ भी नहीं कहा और धमकातेके बदले उस चाकूको बेच उसे पानेके लिये बाजारसे मिठाई लादी। इस लालचसे गगारामका मन चोरी करनेमें खूब लगने लगा। यह जो कुछ चुराकर लाता था, अपनी माताको सौंप देता था और माता भी धनके लालचमें पड कर उससे कुछ नहीं कहती थी, सदा उसका लाड प्यार ही किया करती थी।

कुछ दिनोंके बाद वह लडका पछा चोर होगया और बड़ी चोरिया करने लगा परन्तु दैवतयोगसे एक दिन उसने

चोरी करने समय एक आदमी को मार डाला, इससे वह पकड़ा गया और सरकारसे उसको फाँसी देनेकी आज्ञा हुई। उसका फाँसी पर चढ़ना सुनकर सैकड़ों मनुष्य देखनेके लिये इकट्ठे होगये। उसकी माता भी अपने इकलोते पुत्रसे अन्तिम भेंट करनेके लिये आई और पूट २ कर रोने लगी। गगारामन अपनी मातासे अन्तिम भेंट करनेकी सरकारसे आज्ञा मागी। आज्ञा मिलने पर माँके पास जाकर कानमें बात कहनेके बहाने उसने अपना माताका नाव दातोंसे काट डाली। जिससे उसकी माँ गिरान लगी और सब लोग यह अवस्था देखकर उस लड़के को विचार देने लगे।

गगारामने कहा भाइयो ! आप मुझे घृथा ही बुरा कहते हैं, सबसे पहले मैंने पाठशालामेंसे एक चाकू चुराया था वह चाकू मैंने इसको (माँकी) लाकर दे लिया था। इसने मुझे धमकानेके बदले उल्टी शायासी दी, और चाकू बेचकर मुझे मिठाई ला दी। उस उसी दिनसे मेरी वादत चोरी करनेकी पड़ गई। यदि यह उसी दिन मुझे चोरीके अवगुण बताकर धमका देती, तो आज मेरी यह दशा न होती। इसने मुझे बुरा शिक्षा दी थी, उसका ही प्रतिफल मैंने इसे दिया है। चोरकी यह बात सुनकर सब लोग उसका माँको विचार देने लगे, कि हाय ! इस दुष्ट नीने छोड़से लोभमें पड़कर अपने प्राणासे प्यारे पुत्रको फँसा नास कर्म सिपलाया, जिससे उसे अब फाँसी पर लटकना पड़ता है। इसके बाद चोरको फाँसी लगादी गई। अपने पाप कर्मके फलसे बड़े दुःखसे छटपटाकर गगारामने उस समय प्राण छोड़े।

१। चोरी करना, झूठ बोलना आदि जो जो बुरे

काम हैं और जिन्हें सब समझदार लोग बुरा कहते हैं उन्हें तुम कभी और किसीके भी कहनेसे मत करो । जो कभी एक बार भी करोगे तो धीरे धीरे गगारामकी तरह तुम्हारी भी बुरी आदत पड़ जायगी । क्योंकि बालकपनमें जो स्वभाव पड़ जाता है वह मरण पर्यन्त रहता है । इस कारण बालकपनसे ही अच्छे २ काम करना सीखो । जिस कामको माता पितादि सब लोग बुरा कहे उसको कदापि मत करो । जो माता पिता अपने लड़केको अच्छा बनाकर उससे सुखकी इच्छा करते हैं उनको चाहिये कि पहले आप पढ़कर अपने आचरणोंको सुधारे क्योंकि बड़ुधा देखनेमें आता है कि बालकोंमें माता पिताओंके समान ही आचरण आ जाते हैं । अगर किसी बुरे लड़केकी सगतिसे कोई अनुचित कार्य बन गया हो तो उसे प्यारके साथ उस कार्यके समस्त अङ्गुण यताकर भले प्रकार समझा देना चाहिये और धमका देना चाहिये जो आगे को कभी वैसा कार्य नहीं करे ।

तेईसवां पाठ ।

फूलचन्द और मुकदीलाल ।

फूलचन्द और मुकदीलाल ये दोनों भाई थे । फूलचन्दकी उमर १० वर्षकी और मुकदीलालकी ८ वर्षकी थी । एक दिन प्रातः कालके समय वे किसी एक बागमें हवा खानेके लिये गये । उस बागमें एक तरफ अमराई थी । उस अमराईमें आमके सब पेड़ बड़े २ सुन्दर फलोंसे लदे हुये थे । पके हुये आम कोई लाल कोई पीले, कोई तामस रंगवाले थे, उन्हें देखकर फूलचन्दका मन ललचाया और मुकदीलालसे बोला कि—क्यों मुकदी !

य आम कौस उमदा पइ हुये दिवने हैं । यागमें इस समय कोर भी नहीं है, चलो अपन कुठ आम तोडकर भाग जायें । मुकन्दी लालन कहा कि—छी ! छी ! ऐसा बात बभी नहि कहना । ये आम अपने नहीं हैं । इसलिये तोडना ठीक नहीं है । तब फूलचन्दन कहा कि—अपने नहीं हुय तो क्या हुवा ? आम बहुत है इतमेंसे थोडेसे अपन तोड लेंगे तो धम होगये ऐसा थागके मालिकको मान्दूम नहा हो सकना । आम इतने हैं कि कोर गिनता भी नहि कर सकना ।

मुकन्दीलालने कहाकि—आम बहुत हैं, यह बात सच है तथापि इनमेंसे हम लेंगें यह बात बुरी है क्योंकि दूसरेकी धन्तु कितना भी कम कीमतकी हो पर तु उसको मालिककी आज्ञाके बिना लेना सो चोरा है । तुझे याद नहीं है कि कुठ दिन पहले पुलिसका सिपाही घर चोगके पकड कर अपने दरवाजेके सामनेस मारता पीटना के जारहा था उस समय बिनाज्ञाने हम दोनों का क्या रहा था ?

पिताजीने क्या कहा था मुझे याद नहीं है, नू हा घना ।

तब मुकन्दीलालने कहा—पिताजीन उस समय ऐसा कहा था कि मनुष्य पहिले पहिल 'यह तो तुन्ड बात है' ऐसा समझकर पहिले छोटासा पाप करता है । यह पाप प्रगट नहि हुआ, तब उससे कुछ बडा पाप करता है । इसीप्रकार करते करते घट बडे २ पाप (हिंसा चोरी धमोरह पाप) करनेमें डरता नहीं है । इस कारण मैं कहता हूं कि—यद्यपि इस समय यागका मालिक हमको नहि देखता है परंतु किसी न किसी देवताकी नजर अपनपर अवश्य होगी । यदि इस चोरीको करते देखकर उसे क्रोध

आगया तो वही हमको दंड देगा अथवा हमको यहींपर चोरी किये हुये आमों सहित कील देगा तो फिर चागका मालिक या गावका मालिक वा गाव भरके मनुष्य हमें देखकर कैसी फजीहत करेंगे ?

छोटे भाईका कहना सुनने पर फूलचन्दको अपने कहनेका बडा पश्चात्ताप हुआ । फूलचन्दको पहिले तो आम तोटनेकी बडी इच्छा व जल्दी थी परन्तु “किसी न किसी देरकी नजर अपने पर अग्रश्य होगी” यह वाक्य याद आते ही वह उस पाप कर्मसे प्रिरक्त हो गया । चागका मालिक एक लतानु जमें वहाँ पर आइमें खडा हुआ इन दोनों भाइयोंका वातालाप सुन रहा था । ऐसा वार्तालाप सुननेसे उसे बडा भारी आनन्द हुआ । वह प्रगट होकर उन दोनोंके पास आया और अच्छे २ आम तोड कर उसने मुकन्दीलालको सदाचाराके व्याख्यानसे खुश होकर बतौर इनामके दे दिये । अपने बडे भाईको अपने अन्यायरूप कथनका पश्चात्ताप हुआ इसलिये मुकन्दीलालने आधे आम उसे दे दिये और दोनों जो पुशी २ अपने घर चले जाये । जब अपने माता पिताको चागकी सैररा सब हाल कह सुनाया तो उसे सुनकर उाके माता पिताको जो आनन्द हुआ सो कहनेमें नहिं आ सकता ।

हे बालको ! तुमको भी मुकन्दीलालके समान अपने माता पिता व गुरुजीसे तथा पुस्तकसे जो जो शिक्षा मिले, सस्से धारण कर सदाचारा बनना चाहिये ।

चौबीसवा पाठ ।

विद्या प्रशसा ।

दोहा ।

नृपपद अरु विद्या करहु, होत न एक समान ।
 नृपति पूज्य निज देशमें, सत्र जग विद्यावान ॥ १ ॥
 पढितमें सत्र गुण लसदि, मूढ दोषकी खान ।
 सहस्र मूढसे रर कहा, पढित एक मुजान ॥ २ ॥
 परनारीको यातसप, परधन धूरि समान ।
 सत्र जीवनको आपसप, गिने सो पढित जान ॥ ३ ॥
 विस्तृत कुन मयाद जुत, गुण विन पूज्य न होय ।
 शास्त्रनिपुण अकुलानको, पूजत है सत्र कोय ॥ ४ ॥
 सु दर यौवन सहित हू, उत्तम कुलमें होय ।
 बाहुपुष्पसम ज्ञान विन, शोभा लहै न सोय ॥ ५ ॥
 रजनो मृपण चद्रमा, नारि पति भुवि भूप ।
 विद्याभुषण सत्रनिका, जो जग रूप कुरूप ॥ ६ ॥
 विद्यासे सत्र होत है, धनी ओर गुणवान ।
 विन विद्या जे नर रहें, वे नर पशु समान ॥ ७ ॥
 विद्या बधु विदेशमें, विद्या विपद सहाय ।
 जा नर विद्यावान ह, बह कौंस दुख पाय ॥ ८ ॥
 राज भोग घन सपदा, विपद समय तज जाहि ।
 इक विद्या विपदा समय, तजे न नरकी बाहि ॥ ९ ॥
 निरु दिनको सत्रन लखि, विद्या तजहु न कोय ।
 वैश्याको धन सहित लखि, सती न कुलटा होय ॥ १० ॥

छप्पय ।

विद्या नरको रूप भूप, आदर सरसावै ।

विद्या धन अति गुप्त, आपको आप रखावै ॥

विद्या गुरु महान, भोग सुख करत परम हित ।

विद्या देश विदेश गीचमें होत मातु पित ॥

विद्या इष्ट समान है सदा देह रक्षा करत ।

विद्या रत्न विहीन नर, रस्तीपै पशु सम चरत ॥ ११ ॥

ताँ कोटि उपाय करि, विद्या पढहु सुजान ।

उभय नोक यश मुख लहो, होहु सदा गुणखान ॥ १२ ॥

पच्चीसवा पाठ ।

गुरु शिष्यका सवाद ।

गुरु—क्यों लडके ! तुम सच कहना कि तुमको पतंग (कनकशा) उडाना कैसा अच्छा मालूम होता है ।

शिष्य—गुरुजी महाराज ! ऐसा कौनसा लडका है जिसको पतंगका उडाना अच्छा नहीं लगता है ? अतएव मुझे ही क्यों ? सबको अच्छा लगता है ।

गुरु—अच्छा ! यह तो बताओ पतंगके उडानेमें मुख्य आधार क्या चीज है ?

शिष्य—महाराज पतंगमें यद्यपि अच्छा फागज और अच्छी हवाके होनेकी भी अत्यन्त आवश्यकता है परन्तु इन सबके अच्छा होनेपर भी डोरीके बिना कुछ भी काम नहीं चल सकता इस कारण पतंगमें मुख्य चीज डोरी मालूम होती है ।

गुरु—यदि पतंग अच्छी हवामें बहुत ऊंची चढ़ी हुई हो और

उस समय डोरी टूट जाय तो पतंगकी क्या अवस्था होती है ।

शिष्य—महाशय ! जिस समय डोरा टूट जाता है उस समय पतंग अपनी स्वतंत्रताके साथ ज़िबर निधर उड़ती है परन्तु अतमें जमानपर पड़कर बहुत ही घटा जाती है ।

गुरु—रस ! छोटे पतंगकी समान ही बालकोंका स्वभाव (बालकपन) है अर्थात् जब तक बालक अपने माता पिता तथा गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरी पर चढ़े रहते हैं, तब तक तो उनका कल्याण और हित होता है—ये किसी सराप सगतिमें पड़कर नष्ट भ्रष्ट नहीं होने पाते परन्तु जब ये बालक अपने माता पिता वा अन्य गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरीमेंसे निकल कर स्वच्छन्द हो जाते हैं अर्थात् अपनी इच्छानुसार चलने लग जाते हैं और किसी की भी आज्ञा नहीं मानते तब वे छोटा सगतिमें पड़कर अनेक प्रकारसे नष्ट भ्रष्ट होकर बड़े बड़े दुःख उठाते हैं । उस समय फिर पड़तामा भी बहुत करते हैं परन्तु पड़तासे कुछ भी काम नहीं बन सकता । इस कारण तुम सबको सावधान होना चाहिये । तुम कभी भी अपने माता पिताओंकी तथा अन्य हितैषी गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरीसे घाहर नहीं होना ।

मधु शिष्य—हाथ जोड़ कर हा महाराज ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है । हम सब ऐसा हा करेंगे ।

छत्वीसवा पाठ ।

सदाचारी और असदाचारी नामक ।

किसी शहरमें एक धर्मात्मा धनाढ्य महाशयने एक बालशोध स्थापित की थी, उस पाठशालामें एक सदा

द्वारा अध्यापक रक्का गया था । उस अध्यापकको पाठशाला स्थापन करनेवाले धर्मात्मा सेठने कहा कि इस पाठशालामें दो बड़ा कक्षा रखनी होंगी अर्थात् एक सदाचारी विद्यार्थियोंकी रक्षा और एक असदाचारी बालकोंकी रक्षा । इस प्रकार आग होने पर अध्यापक महाशयने पाठशालाका कार्य भार लेकर सब विद्यार्थियोंसे कहा कि इस पाठशालामें दो कक्षा हैं । एक सदाचारा बालकोंकी और दूसरी असदाचारी बालकोंका । अतएव जो लड़का सदाचारा हो वह सदाचारी बालकोंका इस कक्षामें बैठे और जो असदाचारी हो वह इस दूसरी कक्षामें बैठे । यह आज्ञा सुनकर सब विद्यार्थी सदाचारी कक्षामें जा बैठे, असदाचारा कक्षामें एक भी लड़का नहीं बैठा ।

तत्पश्चात् अध्यापक महाशयने कहा कि तुम तो सबके सब सदाचारा कक्षामें बैठ गये सो ऐसा नहीं चाहिये । तुममेंसे जो जो लड़के असदाचारा हैं, उनको इस दूरी कक्षामें बैटना चाहिये । तब उन लड़कोंमेंसे स्वरूपचन्द नामक सुबोध लड़का था वह लटकर अध्यापक महाशयकी हाथ जोड़कर प्रिनयने साथ बोलकर नि—महाशय ! सदाचारी लड़के कौन होते हैं और असदाचारा कौन होते हैं, इसका भेद समझावें तो आपकी आज्ञाका पालन हो सकेगा ।

अध्यापक—जो लटका पाप कार्य (बुरे काम) करता है । वह तो असदाचारी और जो पापकार्य न करे वह सदाचारी है ।

स्वरूपचन्द—पाप कार्य कौन २ से हैं, कृपा करके बताइये ।

अध्यापक—हिंसा करना, चोरी करना, झूठ बोलना, कुशील संगन करना, परिग्रहका संग्रह करना, आमायाचार (छलकपट)

करना, क्रोध गुस्सा करना, अहंकार वा मान (गर्व) करना, जुभा खेलना, मास खाना, मदिरा (शराब) भग तमाखू चरस पीडी चुस्ट पाना, लडाईं भगडा करना, चुगली करना, निंदा करना, किसीसे राग करना, किसीसे द्वेष भाव रखना, देव गुण शास्त्र तथा बडोंका अप्रितय करना, इत्यादि पापकार्य हैं । इनको जो नहिं करता, उही सदाचारी बालक है और इनको जो करता है, उही असदाचारी है ।

स्वरूपचन्द—महाशय ! आपका कहना सच सत्य है परंतु इन सबका त्याग तो साधु छुटकर तथा दुलोचदजी सरीखे त्यागी बाबाजी वगैरहसे ही वा सकता है, हम लोगोंसे ऐसा बनना कठिन है ।

अध्यापक—यह कहना ठीक है परंतु आपकोंका धर्म एक देश त्याग अर्थात् यथाशक्ति त्याग करना है । सो जिसके करनेसे तुम्हारा वा तुम्हारे हितैषियोंका कोई काम ही न बने, ऐसे व्यर्थ ही स्थूल पाप नहिं करने चाहिये तथा इन सबकी कुछ न कुछ मयादा (हद) रख कर शेषका त्याग करते रहना चाहिये ।

स्वरूपचन्द और सब लटकोंने कहा कि—बहुत ठोक है जहातक हमसे बनेगा हम ऊपर लिखे पापकार्योंका त्याग करते रहेंगे । कुछ दिनोंके बाद सब लटकोंने यथाशक्ति असदाचरण (पापाचरण) छोडकर सदाचारी कक्षामें प्रवेश किया । जिसको देखकर अध्यापक तथा पाठशाला स्थापना करनेवाले महाशय को बडा आनंद हुआ ।

सत्ताईसवां पाठ ।

स्वरूपचन्द्र ।

एक दिन मुरादाबादकी सस्कृत पाठशालामें पंडितजी महाराजने समस्त विद्यार्थियोंको पाठ (सबक) देकर हुकुम दिया कि सब जने अपना २ पाठ कटाग्र करो, जो कोई पुस्तककी तरफ न देख कर दूसरी तरफ देयने लग जायगा उसको मैं पीटे बिना नहीं रहूंगा ।

कुछ समय बाद बन्नूलाल नामका लडका अपनी पुस्तकको देयना छोड़ सिडकीकी राहसे सडककी तरफ देखने लगा, उसके पास स्वरूपचन्द्र नामका लडका बैठा था, उसने पंडितजीको कह दिया कि "देखो" पंडितजी ! बन्नूलाल सडककी तरफ देय रहा है ।" पंडितजीने बन्नूलालकी तरफ देया तो बन्नूलाल सावधान होकर अपनी पुस्तकको पढने लगा । तब पंडितजीने स्वरूपचन्द्रको कहा कि—तुझे कैसे मालूम हुआ कि बन्नूलाल सडककी तरफ देयता था, तब स्वरूपचन्द्रने कहा कि पंडितजी साहब ! मैंने अपनी आंखोंसे देया था कि वह सडककी तरफ देख रहा है । मैं क्या आपके सामने झूठ बोलता हूँ ? पंडितजीने कहा कि बेशक तू झूठ नहीं बोलता, परंतु जिस वक्त तू बन्नूलालकी तरफ देय रहा था, उस वक्त तेरी दृष्टि क्या पुस्तककी तरफ भी थी ? क्या तू अपनी पुस्तक देखना छोड़ बन्नूलालकी तरफ नहीं देयता था ? यह बात सुनकर स्वरूपचन्द्र शरम गया और गर्दन नीची कर अपनी पुस्तककी तरफ देयने लगा । तब पंडितजीने स्वरूपचन्द्रकी पीठ पर हाथ फेरकर कहा कि "भाइ ! दूसरेका दोष देयनेके लिये अपनेको दोषी नहीं बनाना ! क्योंकि

वास्तवमें वहा दोषी है जो दूसरोंके दोष देखा करता है । किन्तु परने दोष देगोंशालोंको हा सब जन दुष्ट, दुर्जन माल इत्यादि नामोंसे पुकारते हैं । आज ता मैं तुझे माफ करना हूँ, परन्तु तिर-
धभा ऐसा काम नहि करना । अध्यात् अपन तो गुण और दूसरों
के अशुण फदापि प्रगट नहि करना चाहिये ।

अट्ठाईसवा पाठ ।

नीतिके दाहे ।

धैरी बह माता पिता, जा निज सुत न पढाय ।
जिमि हसनिकी पातिमें बक नहि शोभा पाय ॥ २ ॥
गुन युत सुत एक हि भना, मूरत शतह न होय ।
एक चद्र जगतम हरी, तारे हरे न कोय ॥ २ ॥
पाच उप सुत लाइकर, दश लागि ताडन सार ।
धम सोनवा आगत ही, करहु मित व्यसहार ॥ ३ ॥
आमनम उहु दोष है, ताडन हँ, गुणखान ।
तिह कारण सुत शिष्यको, ताइ लडावन हान ॥ ४ ॥
सुरभि पुष्पयुत एक तरु, सत्र बन करत सुवास ।
न्याँ गुनवान सुपूत इक, निजकुन करत प्रकार ॥ ५ ॥
अग्निगहित तर एक ही, करत सकल बन टाह ।
स्यो कूपूत निज व शको, नाश करहि छिन माह ॥ ६ ॥
यज्ञाभूषण सहित जड, सुजन सभा बिच जाय ।
जत्र लागि बहू रोले नहि, तत्र लागि शोभा पाय ॥ ७ ॥
राजद्वार कुसमय समर, उत्तर व्यसन मसान ।
इनमें जो साथी सदा, प्रकृत धनु सोई जान ॥ ८ ॥

उनतीसवां पाठ ।

जन (पानी)

जलके बिना कोई भी प्राणी नहीं जो सकता । इस कारण जल सबके जीवनका मूल है । वृक्ष, लता, अन्न शाक, घास वगैरह सब जलसे ही उत्पन्न होते हैं । हम घटलोईमें जलको औंटाते हैं तो उसमें धूँकी माफिरु भाफ निकला करती है । ज्यों ज्यों भाफ निकलती है त्यों त्यों घटलोईका जल घटता जाता है । जिस प्रकार अग्निकी उष्णतासे घटलोईका पानी भाफ बन कर उड़ जाता है उसी प्रकार कटोरीमें जल भर कर धूपमें रखनेसे कटोरीका जल भी भाप होकर उड़ जाता है । परन्तु वह भाफ बहुत सूक्ष्म होती है । अपने नेत्रोंसे देखनेमें नहीं आती । इस प्रकार नदी समुद्र तालाब वगैरहका बहुतसा पानी भाप बन कर आकाशमें चढ़ जाता है और आकाशमें जाकर ठंडी हवासे उसके घादल बन जाते हैं । ये ही घादल फिर गर्मोंका कारण पाकर गल जानेसे जमीनपर पड़ जाते हैं, उसीको वर्षा अथवा मेघ कहते हैं । वर्षासे सब जीवोंका हित होता है । वर्षा यदि न होती तो ज्वार, याजरा, गेहूँ, कपास वगैरह कुछ भी नहीं होते, घास भी नहीं होती और कूप तालाब नदी वगैरह भी सूख जाते । घरसातमें जो पानी घरसता है, उससे नदी तालाब कूप वगैरह भर जाते हैं । परन्तु जब पानीमें घास पत्ते वगैरह गिरकर सड़ जाते हैं तो वह पानी घराब अशुद्ध हो जाता है, उसके पीनेसे मनुष्य तथा पशु वगैरह ^{वगैरहके} रोग उत्पन्न होते हैं, इसलिये जहाँ तक हो ^{तो} तालाब कूप का पानी फटावे ।

पीना चाहिये । अगर कहीं पर स्वच्छ जल नहीं मिले तो गाढ़ रहित तथा जिसमेंस सूर्यका प्रतिबिम्ब नहीं दाखे, ऐसे दाहरे कपड़ेक छानेसे छानकर और अग्निपर भौटाकर काममें लाना चाहिये । अग्निपर भौटासे जल शुद्ध और निर्मल हो जाता है । इसक सिराय फेंसा भी साफ जल क्यों न हो उसमें बस जीव व्यर्थ होते हैं, सो ऊपर लिखेरूप छानेमें छानकर तो भयङ्गी पाना चाहिये । इस प्रकारका शुद्ध जल पीनेसे शरीरका रक्षा होती है, शरीर बनेक प्रकारके रोगोंमें बचा रहता है ।

तीसरा पाठ ।

रात्रि भोजन त्याग ।

होरालाल—क्यों मोतीलाल ! इतना जल्दा जल्दी क्या जाना है ?

मोतीलाल—मैं ब्यालू करनेको जाता हू ।

होरालाल—तो इतना उतावला क्यों भागा जाता है ?

मोतीलाल—साभू होनेको भाइ, अब जो देर करू गा तो रात हो जायगी ।

होरालाल—रात हो जायगी तो क्या हानि है ?

मोतीलाल—रात्रिमें जीमना नहीं हो सकेगा ।

होरालाल—क्यों रात्रिमें जीमनेसे क्या हर्ज है ?

मोतीलाल—भरे हीरा ! तू जैनीका लड़का होकर ऐसा क्यों कहना है ! तू नहीं जानता कि, जैनीका बालक कभी रातमें नहीं जीमता ?

होरालाल—भाई मोतीलाल ! रातमें जीमनेसे क्या हानि होती है ? मैं नहीं जानता ।

मोतीलाल—भाई, रातमें जीमनेसे अनेक जीवोंका हिंसा होती है जिससे जीवहिंसा नामका पाप लगता है। तू क्या रातमें जीमता है ?

हीरालाल—हा भाई ! मैं तो बहुतघर रात्रिमें ही जीमा करना हूँ, फकत मेरे माता पिता रात्रिमें नहीं जीमते । मुझे तो इसकी छूट है ।

मोतीलाल—भाई हीरालाल ! रात्रिमें जीमना बहुत ही हानि कारक है । रात्रिमें जीमनेसे पाप ही लगता है सो नहीं, किंतु कभी कभी जीको बड़ी भारी जोखम भी हो जाती है ।

हीरालाल—जोखम कैसे हो जाती है ?

मोतीलाल—रात्रिमें सुरजशो गर्मी नष्ट हो जाने पर अनेक सुरम (बहुत बारीक) जीव पैदा होते तथा इधर उधर उड़ते फिरते हैं । वे रात्रिमें जोमने वा रसोइ बगैरह बनानेसे थालीमें, भोजनमें गिर जाते हैं । उनमें अनेक जीव जहरीले भी होते हैं । अपने पेटमें उनके चले जानेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं तथा कोई २ जीव तो ऐसा होता है कि उससे जहरकासा काम होकर मनुष्य मर भी जाता है । इसलिये जिनेन्द्र भगवानकी आज्ञा है, कि किसीको भी रात्रिमें कदापि नहीं जामना चाहिये ।

हीरालाल—बहुत ठीक है । भाई मोतीलाल ! अबसे मैं कभी भी रात्रिम भोजन नहीं करूंगा । यह तेरा बड़ा उपकार है, जो रास्ते चलते चलते ही ऐसी ज्ञानकी बात मुझे समझा दी ।

इकतीसवां पाठ

जलगानन वा जनजतु

हे -

इलास रिना छने जलमें जिसे लोग

उममें लारों जीव रहते हैं और वे सत्रके सत्र जलके साथ पेटमें चले जाते हैं । जिससे केवल हिंसा ही नहीं होती है बल्कि वे जीव शरीरको अनेक प्रकारकी हानि पहुंचाते हैं अर्थात् रोग पैदा करते हैं । ये जीव इतने छोटे होते हैं कि—सिवाय सूक्ष्मदर्शक यंत्रके (जिसको अगरेजीमें माइक्रोस्कोप कहते हैं) आँखों से नहिं दीपतें । जलको फोयले और फिटफरी आदिसे कितना ही शुद्ध क्यों न किया जाय परन्तु उसमें जीव अशुभ पाये जायगे । हा ! जिसमेंसे सूरजका प्रतिबिम्ब नहिं दीखे ऐसे ग्रह रहित दोहर मोटे कपड़ेके छत्रसे (गालनेसे) छाननेपर प्राय बहुतसे जीव निकल जाते हैं । इसाकारण ही हमारे आचार्योंने श्रावकाचारमें ऐसे छन्नेसे छानकर जल्पान करनेकी विधि लिखी है । इस कारण हमलोगोंको जिना छना जल किसीभी काममें नहिं छाना चाहिये । जब तुमको पाना पीना हो, उसी एक ऊपर लिखे हुये दोहरे छन्नेसे छानकर पिया करो, क्योंकि दो मुहूर्तके पश्चात् अर्थात् १॥ घण्टेके पश्चात् फिर भी छने हुए पानामें जीव उत्पन्न हो जाते हैं । जैनीके बाहरी मुख्य चिह्न (पहिचान) तीन हैं—एक तो प्रत्येक जीवपर दया रखना, दूसरे पानी छानकर पीना और तीसरे रातमें भोजन नहिं करना; अतएव इन तीनों चिह्नोंको सदैव धारण किये रहो ।

बत्तीसवां पाठ ।

मैठक और बैल ।

एक छोटेसे तालाबके किनारे दो बैल परस्पर लड़ने लगे । उस तालाबमें बहुतसे मैठक थे, उनमेंसे एक मैठकने माथा उठा

जब दूसरे मेढकसे कहा कि, भाई ये बेल तो आपसमें लड़ने लगे, अब क्या करें, अपना क्या हाल होगा ? यह सुनकर दूसरे मेढक ने कहा कि ये बेल लड़ते हैं तो लड़ने दो, हम मेढक जलजतु हैं और ये हैं बल, इनसे हमारा क्या सबध ? जो इनकी लड़ाईकी चिंता करें या डर करें । तब पहिले मेढकने कहा कि, भाई तेरा रहना ठीक है, अपना सबध तो इनसे कुछ नहीं है परंतु ये लड़ते २ इस छोटेसे तालाबमें आ पड़ें तो अपना क्या हाल होगा ? इतना बोलते बोलते ही एक बेलने दूसरे बेलको धक्का लगाया तो वह तालाबमें आपड़ा और उसके सपाटेमें वह दूसरा मेढक भी आ गया और घबरायासा होकर बड़ी मुशकिलसे उसने अपने प्राण बचाये । पहिला मेढक बोला कि देखा भाई, तूने कहा था कि हमारा इससे क्या सबध है, जो चिंता करें ? अब तो प्रत्यक्ष फल देख लिया ? भाई जहां लड़ाई हो उसके पास भी खड़ा रहना नहीं चाहिये । परस्पर कलहसे ही हानि होती हो, सो नहीं है किंतु कलह करनेवालोंके पास खड़े रहनेसे भी हानि होती है । इस कारण हे बालको ! तुम परस्पर कलह (लड़ाई) कदापि न किया करो और अन्य किसीमें कलह होता हो तो तुम उसके पास खड़े भी न रहो । यदि खड़े रहोगे तो तुम्हारे पर दुश्मन प्रपराध लगा देंगे अथवा सरकारमें गजाही देनेके लिये तो अशुभ्य हो दो चार धार फवहरी जाना पड़ेगा ।

तेतीसवां पाठ ।

याद रखने लायक १० नियम ।

१ । काम जितना हो सके, उतना अच्छा ही करना

चाहिये । बुरा काम कदापि नहीं करना चाहिये । इसप्रकार करते रहनेसे पापबन्ध नहीं होगा ।

२ । जो काम करनेसे भाज हो सफता है, उसको बल पर कदापि नहीं छोड़ना चाहिये, इसप्रकार करनेसे कोई भी काम पडा नहीं रहेगा ।

३ । जो काम श्रम्य कर सकते हो, उसे करनेके लिये दूसरेको नहीं कहना चाहिये । इसप्रकार करनेसे तुम पराधीन नहीं रहोगे ।

४ । हाथमें पैसा आनेसे पहिले ही खर्च करनेका विचार अपने मनमें कदापि मत आने दो । इसप्रकार करनेसे तुम किसीके कर्जदार नहीं बनोगे ।

५ । कोई चाज कितनी ही सम्नी कियों न मिले परन्तु जो अपने काम नहीं आवे, उसको कदापि नहीं खरीदना चाहिये । इसप्रकार करनेसे कभी व्यर्थव्यय नहीं होने पावेगा ।

६ । कभी किसीके सामने गर्व नहीं करोगे तो तुम्हारा अपमान कभी नहीं हागा ।

७ । भूखसे अधिक कभी नहीं खाना चाहिये किन्तु भूखसे कुछ न कुछ कम ही खाना चाहिये । इसप्रकार करनेसे कभी रोगी होनेपर पश्चात्ताप नहीं करोगे ।

८ । जो कुछ करना हो बट सतोष और शातिके साथ करना चाहिये । इससे व्यर्थ ही जाको दुःख नहीं हो सकता ।

९ । मोक्षके आदेशमें आकर चाहे जो काम कदापि न कर डालना । इसप्रकार विचार करनेसे फिर कभी भी अपनेको बुरा लगनेका प्रसंग नहीं आवेगा ।

१० । जो कुछ सुख हुआ होता है, वह अपने ही किये हुए
रमानुमार (पाप पुण्यके अनुसार) होता है; सो अपनेको ही
सोचना पड़ेगा, ऐसा हमेशा अपने चित्तमें याद रखकर सब काम
करते रहना चाहिये । इसप्रकार करनेसे निराकुलताकी (सुखकी)
कमा न रहेगी ।

चौतीसवा पाठ ।

नीतिके दोहे ।

जश न नृप श्रोत्रिय सरित, और वैद्य धनवान ।
याम कर नहि एक छिन, पंडित जन तिहि यान ॥ १ ॥
आदर नहि जिहि देशमें, वधु, वृत्ति, नहि होय ।
नहि विद्याको आगमन, तहा न बसिये कोय ॥ २ ॥
मनके चिते कार्यको, भगट करो मत कोय ।
भगट कियेतें कार्य बह, सिद्ध न कवहु होय ॥ ३ ॥
कुनदि कुदेर कुजीयिका, अवर कुद्रव्य कुनार ।
निदित भोजन पान बुन, तजहु नित्य सविचार ॥ ४ ॥
ऋण व्यापी अरु अग्निका, शेष न राखहु लेश ।
ये तीनों शेषहि रहे, क्रम क्रम बढत हमेश ॥ ५ ॥
सुत नारी सेवक सदा, जा नरके बश होय ।
सपत्तिमें सतोष पुनि, स्वग यहीं पर सोय ॥ ६ ॥
दुष्टा नारी मित्र शठ, उचरदाता भृत्य ।
सर्पयुक्त गृहवास पुनि, मृत्यु हेतु ये सत्य ॥ ७ ॥
कोकिल रूप जु मधुर स्वर, पतिसेवा तिय जान ।

पैतीसवा पाठ ।

अजीवक भेद (गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर)

शिष्य—गुरुजी, उम दिन अजीवका लक्षण तो आपने बताया था परन्तु अजीवके भेद नहीं बताया, कृपा करके आज अजीवके भेद बनाइये ।

गुरु—अजीव पाच प्रकारके होत हैं । जैसे, पुद्गल १ धर्म २ अधर्म ३ काल ४ और आकाश ५ ।

शिष्य—पुद्गल किसको कहते हैं ?

गुरु—स्पर्श, रस (स्वाद), गंध और वर्ण (रूप वा रंग) ये चार गुण जिसमें पाये जाय । ये चार गुण पुद्गलमें सदा ही पाये जाते हैं । ये गुण पुद्गलको छोड़कर और किसी भी द्रव्यमें नहीं रहते । ये चारों ही गुण सदा साथ रहते हैं, जैसे—पके हुये आममें कोमल स्पर्श है, मीठा रस है, अच्छी गंध है और पीला वर्ण अर्थात् रूप वा रंग है ।

शिष्य—पुद्गल कितने प्रकारके हैं ?

गुरु—पुद्गल अनेक प्रकारके हैं परन्तु मुख्य भेद दो ही, एक परमाणु और दूसरा स्कन्ध ।

शिष्य—परमाणु किस कहते हैं ?

गुरु—पुद्गलके सबसे छोटे टुकड़ेको परमाणु कहते हैं, जिसका फिर कोई दूसरा टुकड़ा नहीं हो सके ।

शिष्य—स्कन्ध किसको कहते हैं ?

गुरु—अनेक परमाणुओंके मिले हुये एक समूहको (बिंड वा डेलेको) स्कन्ध कहते हैं । धूप, छाया, अघेरा, चादनी, लकड़ी, पत्थर यगैरह सब पुद्गलके स्कन्ध वा पर्याय हैं ।

शिष्य—स्पर्श किसको कहते हैं और वह कितने प्रकार का है ?

गुरु—स्पर्श उसे कहते हैं जो स्पर्शन इन्द्रियसे यानी छूनेसे जाना जाय । वह स्पर्श आठ प्रकारका होता है—स्निग्ध (चिकना) १, रुक्ष (रूपा) २, शीत (ठंडा) ३, उष्ण (गर्म) ४, मृदु (सोमल, नरम) ५, कर्कश (फटोर, फडा) ६, गुरु (भारी) ७ और लघु (हल्का) ८ । जैसे धीमें स्निग्ध, बालूमें रुक्ष, पानीमें शीत, अग्निमें उष्ण, मक्खनमें मृदु, पत्थरमें कर्कश, लोहेमें गुरु, और रूईमें लघु स्पर्श है ।

शिष्य—रस किसको कहते हैं और वह कितने प्रकारका है ?

गुरु—रस उसे कहते हैं जो रसना (जिह्वा) इन्द्रियसे जाना जाय । रस पाच प्रकारका होता है—तिक्त (तोता वा चर्परा) १, कटु (कडुआ) २, फणय (कपैला) ३, आम्ल (छट्टा) ४, और मधुर (मीठा) ५ । जैसे—मिरचमें तीखा, नीममें कटु, आमलेमें कसैला, नीबूमें पट्टा और गुड वा चीनीमें मीठा रस है ।

शिष्य—गंध किसे कहते हैं और वह कितने प्रकारकी है ?

गुरु—गंध उसे कहते हैं जो घ्राण (नासिका) इन्द्रियसे जानी जाय । गंध दो प्रकारकी होती है—एक सुगंध (सुशायू) दूसरी दुर्गंध (बदयू) । जैसे—गुलाबके फूलमें सुगंध और मट्टी के (किराहीन) तैलमें दुर्गंध होती है ।

शिष्य—वर्ण किसको कहते हैं और वह कितने प्रकारका है ?

गुरु—वर्ण (रूप या रंग) उसे कहते हैं जो नेत्र इन्द्रियसे जाना जाय । वर्ण पाच प्रकारका होता है । कृष्ण (धाला) १, नील २, रक्त (लाल) ३, पीत (पीला) ४ और श्वेत (सफेद) ५ ।

५, जैसे कोयलेम काला, नालमें नाला, सिद्धर या रोहमें राह सोनेमें पीला और दूधमें श्वेतयर्ण है ।

शिष्य—नय तो गुरुजा । स्पर्श भाद्र, रस पांच, गंध दो यर्ण पांच, सब मिलाकर पुद्गलके २० गुण हो गये ।

गुरु—हा । पुद्गलके कुल गुण बीस होते हैं ।

शिष्य—अच्छा, गुरुजी । धर्म नामक अजीव पदार्थ किसे कहते हैं ?

गुरु—धर्म उस कहते हैं जो जीव और पुद्गलोंको चलनेमें सहायारी हो अर्थात् मदत देता हो । जैसे—जल मछलीको चलनेमें सहायकारी है । यह धम पदार्थ तमाम लोकमें फैला हुआ एक ही अण्ड और सूक्ष्म (जो अपनी भावोंसे देखनेमें नहीं आता) पदार्थ है ।

शिष्य—अधर्म नामक अजीव पदार्थ किसे कहते हैं ?

गुरु—अधर्म उसे कहते हैं जो जीव और पुद्गलोंके ठहरानेमें सहायारी छ । जैसे—पेड़की छाया धके हुये मुसाफिरोंको ठहरानेमें सहायकारी है । यह अधर्मद्रव्य भी धमद्रव्यकी तरह सर्व लोकम व्याप्त (फैला हुआ) एक ही अण्ड और सूक्ष्म पदार्थ है ।

शिष्य—धर्म और अधर्म द्रव्य जीव और पुद्गलोंको क्या जरूरतस्त चंगते या ठहराते हैं ?

गुरु—ये जरूरतस्ती चलते ठहराते नहीं है किंतु जीव पुद्गल जब स्वयं चलते या ठहरते हैं तब ही उदात्तीनतासे चलाने या ठहरानेमें सहायक होते हैं । परंतु यह ध्यानमें रखना चाहिये कि—धर्मद्रव्य लोकम न होता तो सब पदार्थ एक ही जगह पड़े रहते और अधर्मद्रव्य न होता तो सब पदार्थ उड़े उड़े फिरते । यहां धम अधर्म शब्दसे साधारण धम अधर्म नहीं समझ लेन

त्रिनका अर्थ पुण्य पाप वा मोक्षका ले जानेवाला रत्नत्रय धर्म है ।

शिष्य—कालद्रव्य किसे कहते हैं तथा यह कितने प्रकारका है ।

गुरु—कालद्रव्य उसे कहते हैं जो समस्त द्रव्योंकी पर्याय (हालते) बदलनेमें सहकारी हो । कालद्रव्य निश्चयकाल और व्यवहारकालके भेदसे दो प्रकारका है ।

शिष्य—निश्चयकाल किसे कहते हैं ?

गुरु—लौकाकाशके प्रत्येक प्रदेशमें निश्चयकालका एक एक अणु घडेमे घाजेरेकी तरह भरा हुआ है ये कालाणु असंख्यान हैं और सूक्ष्म हैं जो नेत्रोंसे नहीं दीखते हैं ।

शिष्य—व्यवहारकाल किसे कहते हैं ?

गुरु—ऊपर बताये हुए निश्चय कालद्रव्यकी पर्यायको व्यवहारकाल कहते हैं । जैसे पल, घडी पहर दिन सप्ताह (हप्ता) पक्ष (पञ्चाङ्ग) मास वर्ष वगैरह ।

शिष्य—आकाश किसे कहते हैं और यह कितने प्रकारका है ।

गुरु—आकाश उसे कहते हैं जो समस्त पदार्थोंकी अवकाश (स्थान) दे अर्थात् यह वह पदार्थ है जिसमें समस्त द्रव्य रहते हैं । यह आकाश सर्वव्यापी एक ही अण्ड पदार्थ है परन्तु लोकाकाश और अलोकाकाशके भेदसे दो प्रकारका कहलाता है ।

शिष्य—लोकाकाश और अलोकाकाश किसे कहते हैं ।

गुरु—आकाशमे जहा तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म और काल ये पांच द्रव्य रहते हैं उतने आकाशको लोकाकाश कहते हैं और लोकाकाशके बाहर चारों तरफ जो खाली जगह है उसे अलोकाकाश कहते हैं ।

शिष्य—गुरुजी ! प्रदेश किसे कहते हैं ?

गुरु—आकाशसे सबसे छोटे टुकड़ेको प्रदेश कहते हैं ।

शिष्य—इन पाचों द्रव्योंके त्रिपयमें और भी कुछ विशेष जानना है परन्तु फिर कभी पूछूँगा । इस समय अबल काम नहीं देता ।

गुरु—बहुत ठाक ! यह बहुत सूक्ष्म चया है, फिर कभी समझना ।

छत्तीसवां पाठ ।

मत्स्युपकार ।

एक सिंह गर्मोंके दिनोंमें वृक्षकी छायामें सो रहा था । उसके शरीर परसे थोक चूहे इधरस उधर जा रहे थे । इनमें सिंह जाग उठा, तब उसने एक चूहेको पकड़ लिया । चूहेने अनिश्चय हीनताके साथ प्रार्थना की कि हज़ूर ! मैं बहुत क्षुद्र जंतु हूँ मेरा यह अपराध क्षमा कीजिये । सिंहको दया आ गई, और उसने चूहेको छोड़ दिया । चूहेने जाते समय यह कहा कि आप कभी दुःखमें पड़ेंगे, तो मैं भी आपका दुःख टालूँगा, क्योंकि आपने मुझे जीवनदान दिया है, सिंहने हसकर मग हो मन कहा कि, इस छोटेसे जीवको कितना घमंड है ? भला ! यह मेरा दुःख क्या टालेगा, इस चिन्तारेको मेरे सामर्थ्यका ज्ञान नहीं है कि मैं समस्त बतका राजा हूँ ।

एक समय ऐसा संयोग बना कि उसी वृक्षके नीचे किमी शिष्यारीने सिंहको फसाकर मार डालनेके लिये जाल डाल दिया सिंह सदाकी तरह घसा आया, और आते ही जालमें फस गया ।

उस जालसे छूटनेके लिये ज्यों ज्यों वह जोर करता था त्यों त्यों उस जालमें बच्छी तरह जकड़ता जाता था । जिससे चारों पाव हिलानेमें असमर्थ होकर उसने जानेकी आशा छोड़ दी और बड़े जोरसे चिल्लाने लगा । तब उसका शब्द सुनकर घड़ी चूहा घड़ा पर दौड़ा हुआ आया और अपने जीवनदाना सिंहको महा क्रोधमें पड़ा देखकर उसो मनमें विचारा कि उस दिनके मेरे जीवदानका बदला देनेका यही अपसर है । तब सिंहसे कहा कि महाराज ! बघड़ाइये नहीं आपका दास हाजिर हो गया है । इससे जो कुछ सजा बनेगी करेगा । फिर उसने वह जाल अपने दातोंसे काटकर सिंहको छुड़ा दिया ।

सिंहने मन ही मन विचार किया कि उस दिन में इस चूहेकी आत पर हसा था, परन्तु अब मेरे ध्यानमें आया कि समय पर तिनका भी काममें आता है ।

इस कहानी परसे यही शिक्षा लेनी चाहिये कि दुनियामें किसीको छोटा नहीं समझना । समय पर सब ही काम आते हैं । इसके सिवाय अपने साथ किसीने उपकार किया हो तो उसको कदापि नहीं भूलना चाहिये और दुःखके समय यथाशक्ति तन मना धनसे उस उपकारीकी सहायता कर उसका दुःख दूर करनेमें तत्पर रहना चाहिये ।

सैतीसवां पाठ ।

काच ।

ऐसा कोई भी लडका नहीं होगा जिसने काच नहीं देखा हो । काच कठिन पदार्थ है और उसमेंसे भारपार दीखता है । कोई २

काच इतना स्वच्छ (निमल) होता है कि—उसकी दूसरी तरफके पदार्थ तो दाखते हैं परन्तु यह बाजमें पड़ा है सो नहीं देखता ।
ऐस आरपार निस पदार्थमें दाखता हो, उसे पारदर्शक पदार्थ कहते हैं । काच, पाना, दूध, यक्ष स्फटिक, हीरा शीशु अनेक पदार्थ पारदर्शक ह्यति हैं । जिनमेसे आरपार नहीं दाखता हो उनको अपारदर्शक पदार्थ कहते हैं ।

काच अनेक प्रकारका होता है उसके तैयार करनेमें भा अनेक प्रकारके पदार्थ लगते हैं, साधारण मुद्द देखनेका काज एक प्रकारका है । रंग तिरगे पान दूसरी तरहके होते हैं । बिनोते काज दूसरी तरहका होता है । भाड फालुम बगैरह बनानेका काच भी भिन्न प्रकारका है ।

इन अनेक प्रकारके काज बनानेमें अनेक प्रकारके मशाले लगते हैं परन्तु सब तरहके कासोंमें एक पदार्थ अग्रथ्य ही होत है । उसके बिना कोइ भी काज तैयार करनेमें नहीं आ सकत । उस पदार्थको अगरेजीमें सिलिका कहते हैं यह एक प्रकारका सफेद चमकदार मिट्टी सरापा पत्थर होता है । इस सिलिकामें कम या जियादा पदार्थ मिलाकर गर्म करनेसे काचका रस तैयार होता है । उससे सब तरहके पदार्थ ढाल लेते हैं । उत्तम काच बनानेमें लीसा भी काममें लाया जाता है ।

काचके पदार्थ तैयार करनेपर उसको एकबार भाग पर लूय तपाना पडता है और धीरे २ फिर उनको ठंडा करते हैं । यदि ऐसा नहीं किया जाय तो ये काचके पदार्थ काममें नहीं आते अर्थात् काममें लाते ही पटापट तडक जाने हैं । दीपक पर लगानेका कोई कोई चीमनी जरासी आच लगते तडक जाती है ।

यदि उसको एक घर्तनमें पानी डालकर ग्लूब गर्म करके उबाल लिया जाय तो यह चिमनी आचमे फटापि नहीं तडकेगी ।

शडिया, हाडी, ग्लास, भाड, आरसे, चिमनी, चगैरह पदार्थ काचके बनने हैं । ये पदार्थ एकवार फूट जाते हैं तो फिर जुड़ते नहीं हैं । काच अत्यन्त तडकनेवाला अथात् शीघ्रही फूट जाने वाला पदार्थ है । परन्तु उससे भीतर से आरपार दीपना है और काचके घर्तनमें कोई पदार्थ रखा जाय तो घर्तनका कोई दोष उसमें नहीं आता इसके सिवाय काचके पदार्थ बड़े सुन्दर दीपते हैं, इसी लामसे अनेक लोग काचके घर्तन भाड फानुस लेंपें बिलोने चगैरह रखते हैं और प्रति वर्ष लाखों रुपये व्यर्थ ही खर्च करते रहते हैं जिससे देश दिन २ दण्डि होता जाता है । यदि कोई भी मनुष्य काचके पदार्थ न लेकर अपने पुरुखाओंके अनुसार पीतलके पीलसोत चगैरह तथा अयरपकी चिमनी कागजके फानुसोंमें दीपक चिराम जलाया करें तो लाखों रुपये बच सकते हैं ।

अडतीसवां पाठ ।

जीतिके दोहे ।

वशदोषते कृपण है, कपदोष धनहार ।

मातृदोषते रुग्णता, पितृदोष अज्ञान ॥ १ ॥

बल भोजन अरु दान-रति, भोज्य विभव धरनार ।

ये अति तप विन पुरुषको, मित्रै न वारवार ॥ २ ॥

सांच बचन सुखकर सुधन, मनचाही वर नार ।

मिथ कड भव, ये दुर्लभ जग चार ॥

शैल शैलमें मणि नहीं, मुक्ता गज गज मांदि ।
 वन वन मलयगार नहीं, सर जग साधू नादि ॥
 पडित जाके मित्र भरु, सहवासी कुलवान ।
 जातिमान्य जो होय सो, दुखी न होय निदान ॥ ५ ॥
 पराधीनता कष्टकर, कष्ट निराश्रय वास ।
 धनविन वाणिज कष्टकर, दारिद्र कष्टनिवास ॥ ६ ॥
 दुर्बलको बल नृपति है, शिष्टगणको बल स्रुट ।
 मूढनको मन मोन है, चौरनको बन झूठ ॥ ७ ॥

उनचालीसवा पाठ ।

परिश्रम ।

शरीरको निरोग रखनेके लिये दैहिक परिश्रमका अतिशय आवश्यकता है । क्योंकि परिश्रम करनेसे शरीरमें अतिशय तापन आता है, भूख बढती है और भूखके समय आहार करने शरीरका रक्त (रून) बहुत बढता है । परिश्रमी लोग कब दुर्बल नहीं होते, और न कभी किसी काममें उदसाहहीन ही होते हैं । परिश्रम करनेवालोंका शरीर अनिश्चय बलवान और पुष्ट रहता है । यही कारण है कि परिश्रम करनेवाले किसान यागैर अनिश्चय पल्लिष्ठ रहते हैं । जिसप्रकार शारीरिक परिश्रम करने शरीर सबल और पुष्ट होना है, उसीप्रकार शरीरके जिस भाग अधिक परिश्रम किया जाता है, वही भाग अन्यान्य अंगोंके अपेक्षा अधिक बलिष्ठ हो जाता है । जिन्हें हमेशा चलना फिरना पडता है वे जितना चल सकते हैं, उनकी परावर ओ कभी कभी चलते निरते हैं वे कदापि नहीं चल सकते क्योंकि उनके

बनिक चलने फिरनेसे दोनों पाप अधिक घलिष्ठ हो जाते हैं । इस प्रकार परिश्रमके अनुसार किसीने हाथोंमें किसीके पावोंमें किसीने कंधोंमें अनिश्चय चल होता है अतएव सबको उचित है कि जिनसे समस्त अंग उपागोंका हल चलन होता रहे ऐसे कार्य प्रशस्त किया करें ।

यद्यपि आजकल धनोपार्जनके लिये जो कुछ कार्य किये जाते हैं, उन सबमें ही प्रायः शारीरिक परिश्रम होता है परन्तु उनमें परिश्रमकी अधिकता पर ध्यान नहीं रक्खा जाता, यह अच्छा नहीं है । क्योंकि जिसप्रकार शारीरिक परिश्रमके अभावसे शरीर नष्ट हो जाता है उसीप्रकार अधिक परिश्रम करनेसे भी शरीर नष्ट हो जाता है, जब शरीरमें शिथिलता आने लगे और कमजोरी पढ़ने लगे, तब जानना चाहिये कि परिश्रम बहुत किया जाता है । उसममय चाहिये कि सावधानीसे काम किया करें ।

आजकल बहुधा देखनेमें आता है कि धनपान लाग जितने अधिक रोगी रहते हैं, उतने सदा परिश्रम करनेवाले गरीबलोग नहीं रहते । इसका यहा कारण है कि धनाढ्यलोग शारीरिक परिश्रम बहुत कम करते हैं । चाहे राजा हो चाहे रक, शारीरिक परिश्रम किये बिना किसीका भी शरीर नीरोग नहीं रह सकता । इस कारण धनपानोंको चाहिये कि व्यायाम (फसरन) सर्वदा किया करें । व्यायाम करनेसे प्रायः समस्त शरीरमें हलन चलन क्रिया होती है, जिससे शरीर दृष्टपुष्ट बना रहता है । स्कूलके विद्यार्थियोंमें से कोई २ विद्यार्थी अपने पढ़ने लिखनेमें इतने लगलान रहते हैं, कि वे अपने शारीरिक परिश्रम करनेके लिये कुछ भी

लोग पढ़नेके बाद जब गृहस्थावस्थामें प्रवेश

करते हैं, तब इनने क्षीण हो जाते हैं कि उनका जीवा मारूप हो जाता है, अनपेक्षित ऐसा अत्याय यदापि नहीं करना चाहिये । समस्त लड़कों व युवकोंको चाहिये कि ध्यायाम सदैव किया करें । ध्यायामसे केवल मात्र शरीर निरोग ही रहता है, ऐसा नहीं है, किन्तु साथ ही साथ यह अतिशय बलिष्ठ और पुष्ट हो जाता है जिसमें कि, विद्याभ्यास भी अच्छा होता है । जो लड़के ध्यायाम करके अपने शरीरको हृष्ट पुष्ट बनाये रखते हैं, वे ही विद्या, धन, मान, प्रतिष्ठा पाकर देशके भूषण होते हैं । इसलिये हे बालको ! तुम सदैव कसरत किया करो । यदि तुम्हें कसरत करनेके लिये अघाटे आदिका समय नहीं मिले, तो शाम सवेरे दोनों एक साफ जगल या उपरानी (बागकी) द्वारा घानेके लिये मोल दो मील तो अवश्य हा जाया करो ।

चालीसवा पाठ

आठ कर्मे ।

शिष्य—गुरुजी महाराज ! हमने सुना है कि—कर्मकी गति विचित्र है । कर्म जो करता है, ऐसा कोई नहीं कर सकता सो कर्म क्या चीज है इसको समझा दें तो बड़ा कृपा हो ।

गुरु—भाई यह विषय कठिन है परन्तु तुम्हें सरलतासे बघाता हूँ । ध्यान देकर सुनो । यह तो तुम जानते ही होगे कि जीव पांचाप्रकारके हैं—एकेन्द्रिय, दोन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चोन्द्रिय, पंचेन्द्रिय । सो ये जीव हमेशाह किसी न किसी गतिमें किसी न किसी शरीरमें रहते हैं, जिना शरीरके जीव एक मिनट भी नहीं रहता

ना यह शरीर भी एक प्रकारका कर्म है । इस शरीरके साथ और
अन्य कर्म इस जीवके साथ अनादिकालसे लगे हुये हैं । जिस
शरीरमें यह जीव जाता है, कर्म साथ लगे रहते हैं और
व्यभिचारके सुख दुःख देते हैं । ये सब कर्म आठ प्रकारके हैं ।

शिष्य—इन आठ कर्मोंके नाम क्या हैं सो बताइये ।

गुरु—ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय मोहनीय अतराय
वश्याय वायु नाम और गोत्र ये आठ कर्म हैं ।

शिष्य—इनमेंसे ज्ञानावरणीय कर्म जीवको क्या दुःख
देता है ?

गुरु—जीवमें ज्ञान गुण जिनेंद्र भगवानके समान कोलज्ञान
(सद्यज्ञता) तरुका है परन्तु इस ज्ञानावरणीय कर्म ने समस्त
ज्ञानको (सूरजको बादलकी तरह) ढक रखखा है । थोडा बहुत
ज्ञान गुण प्रगट है इसीसे अपन लोग जानते पढ़ते लिखते रहते
हैं । कोई जीव तो बडा पंडित होता है कोई मूर्ख रहता है सो
इस ज्ञानावरणीय कर्मका ही फल है । जिस जिसके ज्ञाना
वरणीय कर्म अधिक कम हो जाता है उसके ज्ञान भी अधिक
कम होता है । जिसके ज्ञानावरणीय कर्म कम नहीं होता उसको
ज्ञान थोडा होता है ।

शिष्य—और दर्शनावरणीय कर्म किसको बधते हैं ।

गुरु—दर्शनावरणीय कर्म इस जीवके देखनेके गुणको घात
रहा है । अपनेको निद्रा आती है सो यह दर्शनावरणीय कर्मके
द्वारे ही आती है । अर्थात् दर्शनावरणीय कर्म जब जोर करके
अपनी भवता फल दिखाना है तो जीवको कई तरहकी
निद्रा आती है ।

शिष्य—मोहनीय कर्म क्या करता है ?

३७

गुरु—मोहनीय कर्म इस जीवको अज्ञाना करता है तभी औरका और विश्वास करा देता है । क्रोध मान माया लोभ यगैरका जो कषाय जीवक होने हैं वे सब मोहनीय कर्मका ही काम है ।

३८

शिष्य—अतराय कर्म क्या करता है ?

३९

गुरु—अतराय कर्म इस जीवके दान लाभ भोग उपभोगों और बल इन पाचोंके होनेमें विघ्न डालना है अर्थात् दान नहि होने देता, दान करना हो ना उसमें अतराय डाल देता है । धनकी प्राप्ति, भोग उपभोग नहि होने देता, शरीरमें ताकत नहि होने देता है ।

शिष्य—और वेदनाय कर्म क्या करता है ।

गुरु—वेदनीय कर्म इस जीवको अनेक प्रकारके सुख और दुख करता है । जो सुख करता है उसको सातावेदनीय कहते हैं । जो दुख करता है उसको असातावेदनाय कहते हैं । इसप्रकार वेदनाय कर्म दो प्रकारका होता है ।

शिष्य—आयुर्कर्मका क्या काम है ?

गुरु—आयुर्कर्म जीवको शरीरमें भटका रखता है अर्थात् उमर देता है । जितने दिन वा जितने वर्षकी आयु होगी उतने ही दिन वा उतने ही वर्षतक यह जीव एक शरीरमें रह सकता है । जिस समय आयुर्कर्म पूरा होजाता है उसी समय यह जीव इस शरीरको छोडकर दूसरे शरीरको धारण कर लेता है ।

शिष्य—नामकर्म किसको कहते हैं ।

गुरु—नामकर्म शरीर, इन्द्रियां, इन्द्रियोंकी मजबूती सुन्द

ल, असुदृता आदि देता है । नाम कर्म ६३ प्रकारका है सो प्रथमका जुदा जुदा फल देता

शिष्य—और गोत्र कर्मका क्या काम है ।

गुरु—गोत्र कर्म इस जीवको ऊंचे और नीचे कुलमें पैदा करता है । अगर नीचे गोत्रकर्मका उदय होता तो अपन भगो, कनार, कसार, यगेरह नीचे जातिमें पैदा होते परतु हमारे उच्च गोत्रका उदय होनेसे हमने उत्तम घेण्यकुलमें तथा उसमें भी ऊंचे धायक कुलमें जन्म लिया है ।

शिष्य—इन कर्मोंके भेद भी बहुत हैं ।

गुरु—भेद तो अनेक हैं परतु सब मिलाकर बडे बडे भेद १४८ हैं । क्षानापरणीय पाच प्रकारका है । दर्शनावरणीय नौ प्रकारका है । मोहनोय कर्म अट्ठाइस प्रकारका है । अतराय कर्म पाच प्रकारका है । वेदनोय कर्म दो प्रकारका है । आयु कर्म चार प्रकारका है । नाम कर्म तिरानवे प्रकारका है और गोत्र कर्म दो प्रकारका है । इस तरह सब मिलाकर १४८ तरहका है ।

शिष्य—इनका जुदा जुदा भेद नहि बना सकते ?

गुरु—बता तो सकते हैं परतु अभी तुम्हारा समझमें नहि आयेगा, जब इसका तीसरा वा चौथा भाग पढोगे तो समझमें आजायगा ।

इकतालीसवां पाठ ।

याघ और यकरीका बच्चा ।

एक नालेपर एक बाघ पानी पी रहा था । वहा पर एक बक

रीका बच्चा भी पानी पीनेको आया सो दूसरे बाघको देखकर डरा और नालेके नीचेकी तरफ बहुत दूर जाकर पानी पालगा । उसको पापने देखा तो उसने मनमें आया कि इस बच्चे को मारकर खाना चाहिये । परन्तु उसे अपराधी ठहराकर मारना चाहिये, ऐसा विचार करके वह बाघ बकरीके बच्चेके पास गया और उससे बोला कि—क्यों ये ! तू देखना नहीं कि इधर हम पानी पी रहे हैं तू पानी गदला किये देता है ! तब बकरीका बच्चा घबड़ाकर हाथ जोड़के बोला कि—हुजूर भाप तो ऊपरकी तरफ पानी पी रहे थे और मैं नीचेकी तरफ पी रहा हूँ, आपका पाया हुआ पानी मेरी तरफ आता है मेरा तरफका पानी ऊपरकी तरफ फस जा सकता है ?

तब बाघ निरुत्तर होकर थोड़ी देर सोच कर दूसरा शोध लगानेके लिये बोला कि—तू एक बच पहिले मुझे गालिया देता था और मेरी निंदा करता था । तब बकरीका बच्चा बोला कि—हुजूर मुझे पैदा हुये तो अमा चार महीने भी पूरे नहीं हुए, एक बच पहिले मैं आपको गागी किस प्रकार दे सकता था ?

जब इस बच भी बाघ निरुत्तर होगया तो उसे थडा भाघ आया और बोला कि एक बच पहिले तू नहीं था तो तेरा दिना अथवा चन्दा होगा ऐसा कहकर उस बेजसूर बकरीके बच्चेको मार डाला और खा गया ।

इस कहानीका अभिप्राय यह है कि—जयरदस्नके सामने न्याय बचन या सियानपन नहीं चल सकता । यदि दुष्ट मनुष्योंके साथ ऐसा अज्ञान मान पड़े तो चुप रहनेके सिवाय और कोई उपाय नहीं है ।

६० साठ मिनटका	एक घटा ।
२४ चौगोन घटिका	एक दिन (रातके १२ घनेसे रातके बाह्य थजे तक)
७ सात दिनका	एक हमा या एक सताह ।
४ हत्तेका तीस दिनका	एक महाना या एक मास ।
१२ बारह महीनेका	एक वर्ष ।
५० हत्तेका	एक वर्ष ।
३५५ तीनसौ पैंसठ दिनका	एक वर्ष ।

एक हत्तेमें सात वार

- १ रजिवार (अदीतवार व इतवार) २ सोमवार (चन्द्रवार)
३ मंगलवार ४ बुधवार ५ बृहस्पतिवार (गुरुवार) ६ शुक्रवार
७ शनिवार (धार) ।

एक वर्षम बारह महीन ।

हिंदी महीनोंके नाम	अगरेजा महीनोंके नाम ।
१ चत्र (चैत)	१ जनवरी
२ वैशाख	२ फेब्रुअरी (फरवरी)
३ ज्येष्ठ (जेठ)	३ मार्च
४ आषाढ	४ अप्रैल
५ श्रावण (सावन)	५ मे (मई)
६ मादवद (भाद्रों या भाद्रवा)	६ जून
७ आश्विन (कुआर असाज)	७ जुलै (जुलाई)
८ कार्तिक (कातिक)	८ अगष्ट (अगस्त)
९ मार्गशीर्ष (अगहन मगसिर)	९ सेप्टेंबर (सप्टेंबर)
१० पौष (पूस वा पोह)	१० अक्टूबर (अक्तूबर)

११ माघ (माह)	११ नवंबर (नवंबर]
१२ फाल्गुन (फाल्गुन)	१० दिसंबर (दिसंबर)

दो दो महीनेकी पट्ट (छठ) ऋतु ।

१ प्राण २ वर्षा ३ शरत् ४ हेमन्त ५ शीत ६ वसन्त ।

चचालीसवां पाठ ।

चार गति ।

हम तुम सप्रही जीव चालीसवें पाठमें कहे हुये आठों कर्मोंके फलसे इस ससारकी चार प्रकारकी गतियोंमें जन्ममरण करते हुये नाना प्रकारके दु ख भोगते रहते हैं । इसकारण चारगतियों का स्वरूप सबको जानना चाहिये ।

१। नरकगति—घड़े २ आरंभ करने, मदिरापान करने, मास मक्षण करने इत्यादि तीव्र हिंसादिक् पाच पापोंके करनेवाले जीव नरकमें पडते हैं । नरकोंमें रचमात्र भी सुख नहीं है, महा व्यथ शरमय है । अग छेदनभेदनका दु ख सहना पडता है, अग्निमें जलना पडता है । भुख प्यास इतनी लगती है कि सारे ससारका वन जल प्राप्त होनेपर भी नहीं मिट सके परन्तु एक कण अन्न या एक चूद पानी कभी नहीं मिलता । इत्यादि नानाप्रकारके ऐसे ऐसे दु ख बहुत काल तक भोगने पडते हैं जिनका उर्णन केवलजानी भी नहीं कर सकते । ऐसे ऐसे दु ख हम तुम और सप्र जीवोंने अनन्तवार भोगे हैं ।

जिन नरकोंमें उक्त प्रकारके दु ख होते हैं, वे नरक इस पृथ्वीके नीचे स्नात हैं । उनके नाम दो दो हैं । जैसे—१ रत्नाग्रमा (धम्मा) २ शर्कराप्रमा (वशा) ३ बालकाप्रमा (मेना) ..

प्रभा (म जता) ५ धूमप्रभा (भरिष्ठा) द्वि तम प्रभा (मयया १
० महातम प्रभा (माघरी) ।

इन नरकोंमेंसे पहिलेसे दूसरोंमें दूसरका अपेक्षा तासरे भागि
में अधिक २ दुःख तथा आयु भाग्य २ होती है ।

२। नियमगति—छत्र, भूठ, माया आदि करनेस नियंत्रण गति
में जाना पडता है अथात् सिद्ध, पाघ, हाधा, मृग, गाय, मैस बिल
गधा, पत्नी, साव रिच्छु वगैरहका शरार धारण करके भूख
प्यास, गर्मी, शीत, बध प्रथन, मारन ताडन, भासपहन वगैरहके
भनक दुःख भोगन पडते है सो प्रत्यय हम लोग देख रहे है ।

३। मनुष्यगति—घोडा वारम और धाहा परिग्रह रखनेमें
मनुष्यगति होता है । मनुष्यगतिमें हमलोग खाद्य अवाचक धिचा
रस रहिन हो जाते है । लज्जा रहित, परम्ना संघन, मांसभक्षण,
दिसा, चोरी, असत्यभाषणादि पाप करन है, जिनमें नानाप्रकारके
दुःख भागत है । किसीके धन नहीं है, खाने पानेका टिपाना नहि
है । धन है तो पुत्र वीचादि नहि है । जिम्माको पुत्रादि होफर मर
जाते है । फोइ हमेशा रोगी है इत्यादि नानाप्रकारके दुःख इस
मनुष्यगतिमें भोगते है ।

४। देवगति—यद्यपि देवगतिमें नानाप्रकारके सुखदायक
पदार्थ प्राप्त है परन्तु परस्पर घैर, बलश, शोक, मत्सर, काम, मद्र
मरण भय वगैरह मानसिक दुःख घणुन होने है ।

देवगतिमें चार प्रकारके देव हाते है— जैसे भयनवासी,
व्यतर, उयोतिष्क और वैमानिक । भयनवासी इन पृथ्वीसे नीचे
और प्रथम नरकस उपर रहते है । व्यतरदेव इसा पृथ्वीपर पहाड
उगल, नदी आदि स्थानोंमें रहते है । उयोतिषी देव सूर्य

ब्रह्मा ग्रह नक्षत्र तारा ये पांच प्रकारके हैं सो पृथिवीके बीचमें ग्रह योजन उन्हा सुमेरु है उसके चारोंतरफ पूर्वसे दक्षिण पश्चिमकी तरफ होते हुए फिरते रहने हैं और वैमानिक ढेन विमानोंमें रहत हैं । विमानोंमें १६ स्वर्ग ६ ग्रंथेयक ६ अनुदिश और ५ पचोत्तर विमान हैं ।

इन चारों गतियोंमें सबसे उत्तम मनुष्यगति है, क्योंकि मनुष्यगतिमें ही यह जीव ध्यायक तथा मुनिके ज्ञान धारण करके मोक्षपदको प्राप्त हो सकता है । और २ गतियोंमें चरित्र धारण करा बनता । यह मनुष्यगति और इसमें भी उत्तम कुल नारोग क्षारसतसगति बगैरह मिलना अतिशय दुर्लभ है । इस कारण मनुष्यभक्तको पाकर विद्या पढकर धर्म सेवन करके जो कुछ कामन्याण बन सके करते रहना चाहिये ।

पैंतालीसवां पाठ ।

सठके पाच पुत्र ।

एक सठके पाच पुत्र ये वे बडे मूर्ख थे । इसकारण हरएक बातपर आपसमें लडते भगडते थे । उाका पिता अपने पुत्रोंको बहुत समझाया करता था, परन्तु वे एक नहिं सुनते थे । जब पिता मरने लगा तब पाचों पुत्रोंको बुलाकर उन्हें एक कच्चे सूतकी लच्छी (आटी) दी और कहा कि लडको ! तुम सब इसपर अपनो अपने बलकी परीक्षा करो अर्थात् अपने बलने लच्छीके दो टुकडे कर डालो । प्रत्येकने उस आटीको अपना कर लगाकर तोडना चाहा परन्तु किसीसे भी नहिं टूटी । तब पिता ने कहा कि देखा कच्चे सूतका तार कितना कमजोर होता है,

६० साठ मिनटका	एक घंटा ।
२४ चौगोस घंटिका	एक दिन (रातके १२ घंजेसं रातके बारह घंजे तक)
७ सात दिनका	एक हप्ता या एक सप्ताह ।
४ हप्तेका तीस दिनका	एक महीना या एक मास ।
१२ बारह महीनेका	एक वर्ष ।
५२ हप्तेका	एक वर्ष ।
३६५ तानसौ पैंसठ दिनका	एक वर्ष ।

एक हस्त म सात नार

१ रविवार (भदीतवार व इतवार) २ सोमवार (चन्द्रवार)
३ मंगलवार ४ बुधवार ५ वृहस्पतिवार (गुरुवार) ६ शुक्रवार
७ शनिवार (धावर) ।

एक वर्षमें बारह महीने ।

हिंदी महीनेके नाम	अंगरेजी महीनेके नाम ।
१ चैत्र (चैत)	१ जनवरी
२ वैशाख	२ फेब्रुअरी (फरवरी)
३ ज्येष्ठ (जेठ)	३ मार्च
४ आषाढ	४ अप्रैल
५ श्रावण (सावन)	५ मे (मई)
६ भाद्रपद (भादों या भाद्रवा)	६ जून
७ आश्विन (कुभार असोज)	७ जुलै (जुलाई)
८ कार्तिक (कातिक)	८ अगष्ट (अगस्त)
९ मार्गशीर्ष (अगहन मगसिर)	९ सेप्टेंबर (सितेंबर)
१० पौष (पूस या पोह)	१० अक्टूबर (अक्टूबर)

११ माघ (माह)	११ नवंबर (नवंबर]
१२ फाल्गुन (फागुन)	१२ दिसंबर (दिसंबर)

दो दो महीनेकी पट्ट (छठ) ऋतु ।

१ ग्रीष्म २ वर्षा ३ शरत् ४ हेमंत ५ शीत ६ वसंत ।

चवालीसवां पाठ ।

चार गति ।

हम तुम सबही जीव चालीसवें पाठमे कहे हुये आठों कर्मोंके फलसे इस ससारकी चार प्रकारकी गतियोंमें जन्ममरण करते हुये नाना प्रकारके दुःख भोगते रहते हैं । इस कारण चारगतियों का स्वरूप सबको जानना चाहिये ।

१। नरकगति—बड़े २ आर भ करो, मदिरापान करने, मास भक्षण करने इत्यादि तीव्र हिंसादिष पाच पापोंके करनेवाले जीव नरकमें पडते हैं । नरकोंमे रचमात्र भी सुख नहीं है, महा अधकारमय है । अग छेदनमेदनका दुःख सहना पडता है, अग्निमें जलना पडता है । भुख प्यास इतनी लगती है कि सारे ससारका अन्न जल प्राप्त होनेपर भी नहीं मिट सके परंतु एक कण अन्न वा एक घूद पाणी कभी नहीं मिलता । इत्यादि नानाप्रकारके ऐसे ऐसे दुःख बहुत काल तक भोगने पडते हैं जिनका वर्णन केवलज्ञानी भी नहीं कर सकते । ऐसे ऐसे दुःख हम तुम और सब जीवोंने अनंतवार भोगे हैं ।

जिन नरकोंमे उक्त प्रकारके दुःख होते हैं, वे नरक इस पृथ्वीके नीचे सात हैं । उनके नाम दो दो हैं । जैसे—१ रत्नप्रभा (धम्मा) २

प्रभा (अजना) ५ धूमप्रभा (अरिष्ठा) ६ तम प्रभा (मघना)
७ महातम प्रभा (माघवी) ।

इन नरकोंमेंसे पहिलेसे दूसरेमें दूसरेकी अपेक्षा तासरे भादि में अधिक २ दुःख तथा आयु अधिक २ होता है ।

२। तियचगति—छल, झूठ, माया आदि करनेसे तियच गति में जाना पडता है अथात् सिद्ध, घाघ, हाथी, मृग, गाय, भैंस बिल, गधा, पक्षी, साप विच्छेद घगैरहका शरीर धारण करके भूख, प्यास, गर्मी, शीत, वज्र बधन, मारन, ताडन, भारबहन यगैरहके अनेक दुःख भोगने पडते हैं सो प्रत्यक्ष हम लोग देख रहे हैं ।

३। मनुष्यगति—थोडा धारम और थाडा परिग्रह रखनेसे मनुष्यगति होती है । मनुष्यगतिमें हमलोग खाद्य अखाद्यके विचारसे रहित हो जाते हैं । लज्जा रहित, परखी सघन, मांसभक्षण, हिंसा, चोरी, असत्यमापणादि पाप करन है, जिनसे नानाप्रकारके दुःख भोगते हैं । किन्हीके धन नहीं है, खाने पीनेका ठिकाना नहीं है । धन है तो पुत्र पौत्रादि नहीं हैं । किसीको पुत्रादि होकर मर जाते हैं । भोड़ हमेशह रोगी है इत्यादि नानाप्रकारके दुःख इस मनुष्यगतिमें भोगते हैं ।

४। देवगति—यद्यपि देवगतिमें नानाप्रकारके सुखदायक पदार्थ प्राप्त हैं परन्तु परस्पर घैर, बलेश, शोक, मत्सर, काम, मद, मरण भय यगैरह मानसिक दुःख बहून होते हैं ।

देवगतिमें चार प्रकारके देव होते हैं— जैसे भवनवासी, व्यतर, ज्योतिष्क और वैमानिक । भवनवासी इस पृथ्वीसे नीचे और प्रथम नरकस ऊपर रहते हैं । व्यतरदेव इसी पृथ्वीपर पहाड घृक्ष, जगल, नदी आदि स्थानोंमें रहते हैं । ज्योतिषी देव सूर्य

चंद्रमा ग्रह नक्षत्र तारा ये पांच प्रकारके हैं सो पृथिवीके बीचमें लाख योजन उंचा सुमेरु है उसके चारोंतरफ पूर्वसे दक्षिण पश्चिमकी तरफ होते हुए फिरते रहते हैं और वैमानिक देव जिमानोंमें रहत हैं । जिमानोंमें १६ स्वर्ग ६ प्रविष्यक ६ अनुदिश और ५ पचात्तर विमान हैं ।

इन चारो गतियोंमें मनुसे उत्तम मनुष्यगति है, क्योंकि मनुष्यगतिमें ही यह जीव धारक तथा मुनिके ग्रन्थ धारण करके मोक्षपदको प्राप्त हो सकता है । और २ गतियोंमें चरित्र धारण नहीं बनता । यह मनुष्यगति और इन्में भी उत्तम कुल नीराग शरीर सतसगति वगैरह मिलना अतिशय दुर्लभ है । इस कारण इस मनुष्यभक्तको पाकर विद्या पढ़कर धर्म सेवन करके जो कुछ आत्मकल्याण बन सके करते रहना चाहिये ।

पैंतालीसवा पाठ ।

सेठके पाच पुत्र ।

एक सेठके पाच पुत्र थे वे बड़े मूर्ख थे । इसकारण हरएक चातपर आपसमें लडते झगडते थे । उनका पिता अपने पुत्रोंको बहुत समझाया करता था, परन्तु वे एक नहीं सुनते थे । जब उनका पिता मरने लगा तब पाचों पुत्रोंको बुझकर उन्हें एक कच्चे सूतकी लच्छी (आटी) दी और कहा कि लडको । तुम सब इसपर अपने अपने बलका परीक्षा करा क्याव् अपने बलसे इस लच्छीके दो टुकड़े कर डालो । प्रत्येकने उस आटीको अपना बल लगाकर तोड़ना चाहा परन्तु किसीस भी नहीं टूटी । तब पिता ने कहा कि देखो कच्चे सूतका तार कितना कमजोर होता है

परन्तु बहुतसे सुत मिलकर कैसे धनधान होगये ? इसप्रकार यदि तुम लोग जुदे जुदे रहकर आपसमें लड़ते रहोगे, तो तुमको हर कोई दया लेगा और यदि तुम पापों भाई मिलकर रहोगे और एकके दुखमें अपनेको टूटा मान हर तरहसे उसको सुखा करनेकी कोशिश करते रहोगे, तो तुमको बहुत ही आनन्द प्राप्त होगा और कोई भी शत्रु तुम्हारा कुत्र नहिं कर सकेगा । अपने पिताको यह बात सुनकर पापों भाई बड़े खुश हुए और पिताके मरने पीछे आपसमें मेलसे रहकर सुखसे काल व्यतीत करने लगे ।

हे बालको ! भाईके बराबर अपना हितैषी और कोई भा नहीं हो सकता, इसकारण तुम हमेशा अपने भाइयोंसे तथा साथके पड़ोसाले मित्रोंसे प्रीति रखते रह ।

छियालीसवा पाठ ।

नीतिक दोहे ।

जितनी चाह अचाहको, हात अधिक्ता चित्त ।
 उतना सुख दुख जानिय, तन मनको हे मित्त ॥ १ ॥
 समरथका कछु भार नहिं, पुर न विदशदि होन ।
 उधपोनको दूर क्या, हसमुखका पर कौन ॥ २ ॥
 इन्द्रिय सपम सपदा, विपद असयम जान ।
 जाम अपना इष्ट हा, ताहि गहो पतिमान ॥ ३ ॥
 जहा मान मन्सर मदन, मदिरा मिथ्या धून ।
 सो कुस ग दुखदा सदा, जाय न तहां सपूत ॥ ४ ॥
 न्याय विवेक गुणज्ञता, विद्या शील स्वरूप ।
 धीरज सत्य उदारता, सपता वसन अन्नम् ॥ ५ ॥

प्रिय भाषण पुनि नम्रता, आदर प्रीति विचार ।
 लज्जा क्षमा अयाचना, ये भूषण उरधार ॥ ६ ॥
 शत्रु नहीं कोऊ राग सम, विद्या सम नहि मित्र ।
 नहीं सनेह स्वपुत्र सम, विधियल अति ही विचित्र ॥ ७ ॥
 सिधु भूमिका आवरण, गृहरक्षक माकार ।
 नृपति आवरण देशका, त्यों सतीत्व कुलनार ॥ ८ ॥
 तिय महार नरसे द्विगुण, बुद्धि चतुगुण जान ।
 साहस नरसे पद्गुणा, लाज आठ गुण मान ॥ ९ ॥

सैंतालीसवां पाठ ।

ग्रीष्मऋतु ।

घारह महीनेमें वेशाम्ब और ज्येष्ठ ये दो महिने ग्रीष्म ऋतुके हैं । ग्रीष्म ऋतुमें सुरजकी गर्मी अतिशय तेज हो जाता है । नदी नालाय कूप आदि जलाशयोंका जल प्राय सूख जाता है । दिनमें धूपके कारण घरसे बाहर निकलनेको जी नहीं चाहना । शरीर पसीनेसे हर समय तर (भाजा) रहता है और प्यास बहुत लगती है । इन दिनों ममस्त जीव जंतु ठंडा जगहोंमें रहना चाहते हैं, दक्षिणी हवा चला करती है, कभी-कभी अपराह्नके समय आधा व मेह भी आता है । आम, जाम, कटहल, आदि अनेक मीठे फल पक जाते हैं । इस ऋतुमें दिन बढ़ते जाते हैं और रात्रि छोटी हो जाती है ।

बालको ! तुम ग्रीष्म ऋतुके दिनोंमें धूपके समय घरसे बाहर कदापि नहि निकलना । शामके समय जय पृथ्वी और हवा ठंडी हो जाती है, तब खेलनेके लिये घरसे बाहर निकलना तुम्हारे लिये सुखदाई होगा ।

अड़तालीसवां पाठ ।

वर्षा ऋतु ।

वापाठ और धात्रण (सावन) ये दो महीने वर्षा ऋतुके हैं । इन दिनों आकाश प्रायः बादलोंसे घिरा रहता है । वर्षा य मंत्र गर्जना अतिशयताके साथ होता रहती है । नदी नाले तालाब आदि जलाशय जलसे परिपूर्ण हो जाते हैं, कहीं कहीं रास्तेमें भी बड़ा कीचड़ हो जाता है । इस कारण लोगोंके आने जानेमें बड़ा दुःख होता है, वर्षाऋतुमें मंडक बहुत आनंद करते हैं । मंडक-गण नदीन जलको पाकर उच्चस्वरसे गान गाते रहते हैं, मयूर गण (मोर) भी मेषगजनाको सुन आनंदमें उमत्त हो नाचते रहते हैं । फेसकी और कदय आदिके फूलोंका सुगंधसे दशों दिशा भर जाता है । अननास आदि अनेक मृदादिष्ट फल पक जाते हैं, किसान लोग खेतोंमें धान्यादि आने लग जाते हैं ।

इस ऋतुमें प्रायः पुनः हवा चग करता है । यह हवा अति-शय हानिकारक है, उस हवाका अपने शरीरपर कभी नहीं लगने देना चाहिये । यदि यह हवा तुम्हारे शरीरपर लगी और मेषमें भीजोगे तथा कीचड़में फिरोगे तो कफ (जुखाम) खासी, उश्च (बुखार) आदिक रोगोंसे पीड़ित हो जाओगे ।

उनचासवां पाठ ।

शरद ऋतु ।

भाद्रपद (भाद्र) आश्विन (कुवार) ये दो महीने शरद ऋतुके गिने जाते हैं । इस ऋतुमें आकाश निर्मल हो जाता है, किरणें तेज हो जाती हैं, रास्तेका कीचड़ व जल सूखने

लग जाता है, नदीका जल भा निर्मल हो जाता है, और तारा तथा चंद्रमाका प्रकाश उज्ज्वल हो जाता है, जिससे रात्रिमें आकाशकी शोभा अतिशय मनोहर हो जाती है। इस ऋतुमें कमल, कुमुद आदि पानीमें पैदा होनेवाले फूल प्रफुल्लित होकर जलाशयोंको शोभा बढ़ाते हैं। हस, बगुला, चक्रवाक, आदिक जलचरपक्षी आनन्दसे जन्ममें खेलते फिरते हैं, ताल, नीयू, सुपारी, गारियल, आदि अनेक फल पक जाते हैं।

शब्द ऋतुमें सत्रके सत्र सेत धायसे परिपूर्ण हो नेत्र और मनको आकर्षण करते हैं। हे बालको! यदि तुम इस ऋतुमें सभ्या सत्रे खेतोंमें हवा गाने जाओगे, तो देवकर पुरा हो जाओगे। इस ऋतुमें धूप अतिशय हानिकारक होती है। यदि इस ऋतुकी धूपमें फिरोगे तो तुम अग्र्य रोगी हो जाओगे।

पचासवां पाठ ।

हेपत ऋतु ।

कार्तिक और मार्गशीर्ष (अग्रहन) ये दो महीने हेपत ऋतुमें गिने जाते हैं। इस ऋतुमें उत्तरी तरफसे थोड़ी २ ठंडी हवा आने लगती है, और थोड़ा थोड़ा शीत भा पडने लगता है। रात्रिमें इतना ओस पडता है कि—प्रात काल ही देखनेसे मालूम होता है मानो मेह घरसा है।

इन दिनों सब लोग रुई भरे अथवा ऊना गरम कपड़े पहनने लग जाते हैं, और क्रमक्रमसे दिन छोटा और रात्रि बडी होती जाती है। धूपकी गर्मी भी क्रमक्रमसे घट जाती है। इन दिनों खेतोंमें सब अन्न पक जाते हैं।

हमारे ऋतुको ठंड शरीरपर लगीसे दर्द हो जाता है, इस कारण शरीरको सदा गम बचड़ोंसे ढका रगना चाहिये । हे बालको ! इन दिनों रात्रिमें न प्रभात हा उधारे शरीर घरके बाहर पदापि मन निकलो ।

इकावनवा पाठ ।

शीत ऋतु

बौध और मात्र ये दो महाने शान ऋतुमें गिन जाते हैं । इस ऋतुमें उत्तरकी हवा जितने आरसे आता है, उतनी ही ठंड अधिक पडती है । रात्रिका मय गेग ठंडसे बचनेके लिये सौड बंधल आदि काममें लाते हैं दिनमें भी शाह दुशाला बनान रजाई आदि ओढे बिना ठंड नहिं जाता । इन दिनों पाना छुनेको किसीका भी जा नहिं चाहता । मयको सूर्य और अग्नि ही प्रिय हो जाते हैं ।

रात्रिमें आकाश कुहरा वा ओससे ढक जाता है जिससे तारागण और चन्द्रमा निमल नहिं दोखत । इस ऋतुमें रात्रि बहुत बडी और दिन बहुत छोटा हो जाता है । बगाल देशमें मृग मटर, सरसों आदिक धान्य पक जाने हैं परंतु कमल कुमुद वगेरहके फल सब गष्ट हो जाते हैं । इन दिनों कहीं कहीं मेढ भी घरसने लगता है और सब लोगोमें परिश्रम करनेकी शक्ति बढ जाती है ।

बावनवा पाठ ।

वसंत ऋतु

फाल्गुण और चैत्र ये दो महिने वसंत ऋतुमें गिने जाते हैं ।

वसत ऋतुमें दक्षिणकी तरफसे मंदमंद हवा चलने लगती है। आकाश निर्मल हो जाता है। सूर्यका तेज अधिक होने लगता है। चंद्रमा और तारोंका प्रकाश निर्मल रहता है। प्राय सभी जातिके वृक्ष और लताओंकी शोभा बढ़ने लग जाती है। किसीके नये २ पत्ते निकलते हैं, किसीके मजरी, किसीके फूल और किसीके फल लगने शुरू होते हैं। भौरे और मधु मखियां एक फूलसे दूसरे फूलपर उड़ २ कर घैठतीं हैं और कोकिल आदि पक्षी वृक्षकी शाखाओं पर घैठे हुए बड़े मनोहर स्वरसे बोलते हैं।

वसत ऋतु सत्र ऋतुओंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है, इसलिये ऋषि लोग इसे ऋतुराज कहते हैं। इस ऋतुमें शीत, उष्णता, वृष्टि आदि कुछ भी नहीं रहतो, इस कारण समस्त जीव जंतु आनन्दसे रहते हैं।

तिरेपनवां पाठ ।

जनवृष्टि भ्रोले व चरफ ।

सूर्यकी तेजीसे नदी, कूप, तालाब, समुद्र आदिसे जलकी बहुत सूक्ष्म भाफ होकर आकाशमें एकत्र होनेस बद्दल हो जाते हैं और ठडी हवा लगनेसे घादलोंका अंश एकत्र होकर थड़े २ जल बिंदु हो जाते हैं। तब ये जलबिंदु भारी हो जानेके कारण हवा के सहारे आकाशमें नहीं ठहर सके, इस कारण जमीन पर आ पडते हैं। इसीको जलवृष्टि अथवा वर्षा होना कहत हैं।

नदी तालाब आदि जलाशयोंकी अपेक्षा वृष्टिका जल निर्मल होता है क्योंकि सूर्यकी तेजीसे भाफ होने समर बद्द जल शुद्ध हो जाना है।

। पृथ्वीके समस्त सडों (देशों) में जलवृष्टि एकसी नहीं होती, वहाँ वहाँ पर तो वृष्टि हमेशा हुआ करती है और वहाँ वहाँ पर वर्ष भरमें एक बार भी नहीं होती । इसका कारण यही है कि जिन जिन देशोंमें नदी समुद्रादिक बहुत होते हैं उन देशोंमें अधिक भाफ बनती है और उन देशोंमें वृष्टि भी अधिक होती है । और जिन देशोंमें नदी तालाब आदिक कम होनेसे भाफ बहुत कम पैदा होती है, अथवा अन्य देशोंसे भाफ बने हुए बढ़ल रहि आसके चहापर वृष्टि बहुत कम होती है । बंगाल देशकी पूर्व सीमामें खसिया पहाड़ और चिंगपुजी आदि देशोंमें अन्या न्य जगहोंकी अपेक्षा वृष्टि अधिक होना है और हिमालयसे उत्तर तिब्बतमें बहुत कम वृष्टि हाता है । उसका कारण यही है कि बंगालके उपसागरोंमेंसे उत्पन्न हुई वाफ (बढ़ल) हिमालय पर्वतकी उल्लंघन करके नहीं जा सकती । इसीप्रकार मारवाड़ देशोंमें भी नदी समुद्र न होनेसे वृष्टि बहुत कम होता है ।

बंगाल देशमें व वर्षई प्रातोंमें उषा ऋतुके समय प्रायः निरंतर जलवृष्टि हुआ करती है । कारण उस समय बंगालमें दक्षिण की हवा आता है सो वह हवा बंगालके उपसागरसे बने हुवे बहुतसे बादलोंको उठा लाता है, इससे सिधाय बंगाल देशमें नदियें भी बहुत हैं और धरईके तो प्रायः तान तरफ ही समुद्र है, जिससे प्रतिदिन बढ़ल बन बन कर प्रायः प्रतिदिन वृष्टि हुआ करती है । शीतकालके दिनोंमें बंगाल देशमें वृष्टि बहुत कम होती है कारण उन दिनोंमें उत्तरकी हवा चलती है और उत्तरकी तरफमेंसे समुद्र नहीं है इस कारण वाफ व बढ़लोंकी उत्पत्ति नहीं होती परन्तु चैत व वैशाखसे ही वर्षा होने लगती है ।

बीचमें कभी २ थोले पड़ा करते हैं सो जिस समय बहलों मेंसे बड़े २ जलत्रिंडु गिरते हैं उस समय अतिशय ठंडी हवा लगनेसे वे जमकरके थोले हो जाते हैं ।

बहल हवाके घेगसे उड़ उड़ कर पर्वतों पर जाकर इकट्ठे हो जाते हैं । बहा अतिशय ठंडी हवाके लगनेसे जमकर तुपार (ओस) हो जाता है और तुपार जमकरके बर्फ हो जाता है ।

शीतप्रधान देशोंमें दो दो तीन तीन दिन तक तुपारकी वृष्टि होती है तब समस्त घर द्वार रान्ते घाट तुपारसे ढके हुए श्वेत वर्ण दीयते हैं ।

अधिक शीत होने पर शीतप्रधान देशमें जल जमकर बर्फ हो जाता है । उन देशोंमें तालाब हद, नदी नगररूफा उपरिभाग जम जानेसे उसके ऊपर होकर जमीनकी तरह लोग चल फिर सकते हैं । जब सूर्यका तीक्ष्ण आताप लगता है तो गलकर फिर जल हो जाता है ।

चौवनवा पाठ ।

आभार मानना ।

एक दिन एक पाठशालाके समस्त विद्यार्थियोंने अपने गुरुजी से विनय करके कहा कि—महाराज आज तो हमें फोड़ पेसी शिक्षा दाजिये जिसको हम लोग हमेशा याद रखें । विद्यार्थियों का यह प्रश्न सुनकर गुरुजीने कहा कि—बच्छा तुम अपनी २ सिलेट पर तीन शब्द लिखो,—

आचार, भावना, रहस्य ।

गुरु—अब तुम लोग इन तीनों शब्दोंके अर्थ कहो ।

एक विद्यार्थी बोला—आचार कहिये अपने देश व कुल्का उत्तम रीति वा रियाज।

दूसरा विद्यार्थी बोला—भायना कहिये हित अहितके विषयो का धारधार चिंतन यानी विचार करते रहना।

तीसरा विद्यार्थी बोला—रहम कहिये दया अर्थात् दीन दु खी असमर्थ जीवों पर दया करना।

गुरु—अच्छा अब इन तीनों शब्दोंका पहिला २ अक्षर लेकर एक शब्द बनाओ।

एक विद्यार्थी—महाराज! आचार शब्दका पहिला अक्षर 'आ' भायनाका पहिला अक्षर 'भा' रहमका पहिला अक्षर 'र' इन तीनोंको मिलानेसे 'आभार' शब्द हुआ।

गुरु—हे लड़की! अब इस शब्दका अभिप्राय समझो कि जो कोई अपने साथ मलाई करे, अपनेको किसी भी अच्छे कार्यमें सहायता दे वा उपकार करे, दु खसे छुटावे, अच्छे रस्ते पर लगावे, उसको अपने मनमें हमेशा याद रखना और अपने घबनोंसे प्रगट करना कि उ-होंने हमारा बड़ा उपकार किया है। उस उपकार करनेवाले पर कोई भी दु ख पड़े तो अपना तन मन धन खर्च करके उसका प्रति-उपकार करना इसीको आभार मानना कहते हैं। जिसमें आभार माननेका गुण है, उसमें ही सदाचार भावना, रहम ये तीन गुण होते हैं अर्थात् जिसका अच्छा आचार हो, अच्छे विचार हों, और दया हो, वही मनुष्य दूसरेका आभार मान सकता है। जो मनुष्य दूसरेके किये उपकारको मानता नहीं भूल जाता है, उसको कृतघ्नी कहते हैं। कृतघ्नीका फिर कोई भी दूसरी धार उपकार वा सहायता नहीं

करता । यद्यपि दूसरेका उपकार तो किसी न किसी समय माननेमें आ भी जाता है परन्तु तुम लोगोंका जो वास्तवमें हमेशाह उपकार करनेवाले हैं, उनका आभार तो तुम्हें हमेशाह हृदयसे मानना चाहिये । मनुष्यकी जिंदगीमें वास्तवमें उपकार करनेवाले ४ जने हैं—माता, पिता, धर्मगुरु और विद्यागुरु ।

माता हमको अनेक कष्ट सहकर पालन पोषण करके बड़ा करती है, पिता हमको विद्या गुण सिखाकर योग्य बनाते हैं । धर्मगुरु हमको अपने उपदेशों द्वारा पापका रास्ता छुड़ाकर धर्मके मार्गमें लगाते हैं और विद्यागुरु हमको नानाप्रकारकी विद्यायें सिखाकर पशुसे मनुष्य बनाते हैं, इसलिये इनका आभार जीवनपर्यंत भूलना नहीं चाहिये ।

सब विद्यार्थी अपने गुरुजीका यह उपदेश सुनकर बड़े प्रसन्न हुये और सबने प्रितय करके कहा कि—हम आजसे कभी किसी का उपकार नहीं भूलेंगे अर्थात् सबका आभार मानेंगे ।

पचपनवां पाठ ।

सत्संगति ।

किसी शिकारीने एक पेड़के नीचे चावलोंके दाने धपेर कर उनपर जाल फैला दिया । वहा पर एक चित्रप्रीव नामक फतू तरोंका राजा अपने साथियों सहित उडता उडता आ निकला । तब उन सब फतूतरोंने कहा कि “चलो इन चावलोंको चुगें ।” परन्तु चित्रप्रीवने कहा कि, मुझे इसमें सदेह है, इसलिये पहिले इस बातको जानना चाहिये कि इस सुनसान जगलमें चावल कहासे आये ? और सुनो, जो तुम बिना विचारे इन चावलोंको

धुगनेके लिये नीचे उतरोगे तो किसी न किसी विपत्तिमें अग्र्य ही फसोगे । देखो गिरधररायजीने क्या कहा है कि—

कुडलिया ।

बिना विचारे जो कर, सो पाछे पछताइ ।

काम विगारे भापनो, जगमें हात हसाइ ॥

जगमें होत हसाइ, चित्तमें चैन न पावे ।

खान पान सपान, राग, रगु मनहि न भावे ।

कह गिरधर कविराय, दुख कछु दरत न टारे ।

गटकत हे जियमाहि करे जो बिना विचारे ॥ १ ॥

यह सुनकर एक कबूतर बोला—'धोह ! इस बुडढेकी बात फहा तक माने !' और जो इसा प्रकार बात बातमें सोचा करे तो फिर खाना किस तरह मिले ? और कैसे जीये ? यह सुन ही सपके सय कबूतर नीचे उतरे, तब चित्रश्रीवने सोचा कि जं हो सा हो, पर अब इनका साथ छोडना ठीक नहीं । इस प्रकार सोच समझ कर वह भा सपके साथ नीचे उतरा, नीचे उतरते ही सपके सय जालमें फस गये और जिसके कहनेसे नीचे उतरे थे उस कबूतरको सय बुरा भला कहने लगे । उस समय चित्रश्रीवने कहा कि, भाई ! इसमें इसका कुछ भी दोष नहीं है । जब विपन् के दिन आते हैं, तब मित्र भी बरी घन जाते हैं । इसलिये अब धीरज धरके इस जालसे छुटनेका यत्न करो । क्योंकि नीतिमें कहा है कि—

कुडलिया ।

बीती ताहि विसार दे, भागेकी सुध भेदु ।

जा वनि भावे सहजमें ताहीमें चित देदु ॥

ताहीय चित देदु, बात जोई वनिभाये ।

दुर्जन हसे न कोय, चित्तमें खेद न पावै ॥

कह गिर पर करिराय, यहै कर मन परतीती ।

आगेको सुख होय, समुझ बीती सो बीती ॥ २ ॥

इतना रह चित्रग्रीव फिर घोला कि, अथ सब मिलके इस जालको लेकर उड़ चले । क्योंकि जो थोड़ेसे भी मिलकर काम करे, नो बड़े बड़े काम हा सकते हैं । देखो ! बाल सत्रमें कमजोर दिग्गइ देता है, परंतु उन्हीं बालोंको एकत्र फरके बाट लो, तो उसका ऐसा पक्का और मोटा रस्सा बन जाना है, जोकि बड़े बड़े मूलाहोंने भी नहीं टूट सकता । अथेला तार कच्चा कहलाता है, पर जब बहुतसे तार आपसमें बल खाके मिल जाते हैं, तो वे कच्चे तार ऐसे पक्के रस्से हो सकते हैं, जो हाथियोंसे भी नहीं टूट सकते । पानीका एक बिंदु किस गिनीमें है ? परंतु बिंदु २ मिलके एक नदी बन सकती है, जो सारे शहरको बहाकर ले जाय । यह सुनकर समस्त फव्वतर जाल लेकर उड़े । नब वह शिकारी बहुत दूर तक उनसे पीछे पीछे भागा, परंतु जब वे धूतर दृष्टिको ओटमें होगये, तब वह शिकारी निगश होकर लौट आया । आकाशमें उड़ते हुये सब धूतरोंने चित्रग्रीवसे कहा कि, महाराज ! वह शिकारी तो हमारे मासकी आशा छोड़कर चला गया, अथ हमको क्या करना चाहिये, जो इस जालसे हूँ ? चित्रग्रीवने कहा कि, इस सत्रमें,—

“सुर नर मुनि सत्रकी यहि रीती ।

स्वारथ न्नागि करहि सय प्रीती ॥”

परंतु माता पिता मित्र ये तीन अपने स्वभाव ही हितैषी होते हैं, इसलिये एक हमारा परममित्र इच्छक नामका चूहा

विश्रवणमें गडकी नदीके किनारे पर रहता है, वहाँ धलो तो यह हमारे जालकी गांठे काट सकता है। ऐसा सोच विचारके ये सब कवूतर हिरण्यक भूसेके बिलके पास आये। कवूतरके उतरनेके शब्दसे डर कर हिरण्यक बिलमें घुस गया परन्तु जब विश्रमीत्र बोला कि—मित्र ! बाहर आओ ! तब चूहा मित्रकी बोली पढ़ जानकर बाहर आ बोला,—भाहा ! आज मेरा बड़ा भाग्य है, जो परममित्र विश्रमीत्रके दर्शन हुए। फिर सबको जालमें फसे देख कर बोला कि, मित्र ! यह क्या कौतुक है ? विश्रमीत्रने कहा कि भाई ! यह मेरे पुर्यजन्ममें किये हुये पापोंका फल है, क्योंकि जिसके भाग्यमें जो लिखा है, यह अवश्य मिलता है। यह सुन कर यह चूहा विश्रमीत्रकी गांठे काटने लगा, तब विश्रमीत्रने कहा कि, भाई ! पहिले इन सब कवूतरके गांठे काट लो, तब मेरी फाटना। चूहेने कहा—मित्र ! ये गांठ तो बहुत फडी हैं, और मेरे दात बड़े नर्म हैं, सो मैं अकेला इन सबकी गांठे किसप्रकार काट सकता हूँ, अतएव जबतक मेरे दात नहिं टूटै तबतक तुमारी गांठे काटूँगा, फिर हो सका तो इनकी भी काटूँगा। विश्रमीत्रने कहा कि, जो ऐसा हो है तो जहातक बने, पहिले इन्हींकी गांठे काटो। हिरण्यक बोला—भाई ! यह कौनसी नीति है, जो आप तो दुःखमें पस रहना और दूसरोंको बचाना ? विश्रमीत्रने कहा कि, तुम्हारा कहना ठीक है। परन्तु मैं इनका दुःख देख नहीं सकता, दूसरे ये सब बिना चेतनके मेरी सेवा करते हैं, और हमें यह मेरे साथ है सो इसका फल फिर क्या और किस कालमें होगा ? जो धन दौलत और यह देह दूसरके काममें आवे, तो फिर इससे बढ़कर क्या है ? सो मित्रवर ! निरतर मल बहाने-

वाली इस नाशवान देहकी ममता छोड़कर अण्ड यशके भागी क्यों नहीं होते ? यह सुन हिरण्यक चूहा बहुत प्रसन्न हुआ, और बोला कि, मित्र ! तुम्हें धन्य है जो अपने साथियों पर इतनी दया और ममता करते हो यह कहकर उसने सयकी गाँठें काट डालीं । किसीने सच कहा है कि—

सगति कीजै साधुकी, हरें भोरकी ब्याधि ।

भ्रांछी सगति नीचकी, भ्रांठों पहर उपाधि ॥ १ ॥

द्विपते मिट भसाधुपन, लहै भगाध विवेक ।

देखो सगति साधुकी, हरें उपाधि अनेक ॥ २ ॥

तत्पश्चात् सव धवृत्तोंको पहुनागतसे प्रसन्न करके, गिनिय-पूर्वक विदा किया ।

छप्पनवां पाठ ।

सत्सगति प्रशसा ।

(स्वर्गीय पंडित गोपालदासजी हत)

सज्जनसगतिके किये, उन्नत हँ सत्र क्षीर ।

कमलपत्र पर जनकणा, मुक्ताफल सप्त होय ॥ १ ॥

चदन शीतल जगतमें, तातै शीतल चंद्र ।

चदन चदातें अधिक, साधुसग सुखकर ॥ २ ॥

तेजस्वीके सगतें, छुट्र तेजयुत होय ।

ज्यों दपन रविकिरनतें, दहनशक्ति भ्रमण ॥ ३ ॥

साध्य करै दु साध्यको, सतसगति सुखकर ।

पुष्पस ग शिवसिर चढी, चिबटी चूबै कर ॥ ४ ॥

जो सत्स गति करत है भक्ति कर ॥

मान प्रतिष्ठा यश लई, करहि सकल कल्याण ॥ ५ ॥

सत्स गतिके योगत, खन सज्जन हो जाय ।

ज्यों पयके स योग जन, पयसय उज्जस्र थाय ॥ ६ ॥

सज्जनकी स गति किये, मूढ होय गुणधाय ।

स्वातिर्विदु सीपाई परे, मुक्तफन परिणाम ॥ ७ ॥

धुडलिया ।

सज्जनस गतिके किये, मूढ होय विद्वान् ।

सत्य वचन नित उचारे, बडे जगतमें मान ॥

बडे जगतमें मान, पापको नूर विस्तारहि ।

हाय मफुद्धित चित्त, दर्शों दिगु यश विस्तारहि ॥

कहे सुकवि 'गोपाल' नाशकर दुखकी पंगति ।

होय सदा नर सुखी, करे जो सज्जन स गति ॥ ८ ॥

दोहा ।

तति छोरि कुस गको, सत्स गति चितधार ।

करहु सफल नर जन्मको, यही जगतमें सार ॥ ९ ॥

सत्ताचनवा पाठ ।

कौशा और चिडिया ।

एक चिडिया कहींपर दान चुग रही थी, दाने चुगते २ उसको एक मोती मिला गया । उसने प्रसन्नताके साथ एक कौशिको दिलाकर कहा कि देखो भाई ! मुझे एक मोती मिला है । कौशिकेने कहा देखू यह सचचा है या झूठा ? तब चिडियाने जमीन पर रखके दिखाया तो कौशा उस मोताको उठाकर भट्ट धीकरके पेडपर आ बैठा । चिडियाने अनेक प्रकारसे प्रिनती करके अपना मोती मागा, परंतु कौशिकेने नहि दिया । तब लाचार होकर उसने मन

हामन दृढ़ प्रतिज्ञाकी कि "जिस प्रकार घने इससे मोती लेना चाहिये ।" ऐसा विचार कर वह चिडिया कीकरसे कहने लगी कि हे कीकर ! तू इस फौवैको उडादे । कीकरने कहा कि फौवैने मेरा क्या बिगाडा है जो मैं उडादू । तब वह चिडिया निराश हो घड़ई (राती) के पास गई और उससे अर्ज की कि तुम अमुक कीकरको काट डालो । घड़ईने कहा कि मेरा उसने क्या बिगाडा है जो कीकरको बट डालू ? तब वह चिडिया वहासे निराश होकर उस गांवके राजाके पास गई और कहने लगी कि महाराज ! आप अपने यहांके अमुक खातीको दंड (सजा) दें राजाने कहा कि उसका कोई अपराध नहीं जो मैं दंड दू । तब वहासे लाचार हो वह चिडिया उस राजाकी रानियोंके पास गई और अर्ज करी कि तुम राजा साहबसे रुठ जाओ । रानियोंने कहा कि याह हम राजा साहबसे रुठ जावें तो हमको सुख कैसे हो ? तब वह चिडिया चूहोंके (मुसोंके) पास गई और प्रार्थना करा कि तुम मेरी सहायता करो अर्थात् रानियोंके पहरोके सब कपड़े काट डालो । चूहोंने कहा कि हम जो उनके कपड़े काट डालें और रानिय गुस्सा हो जाय तां ये शहर भरके चूहोंको मरवा डालें, सो भाई हमसे तेरी सहायता नहीं हो सक्ती । तब लाचार हाथ वह बिल्लीके पास गई और प्रार्थना की कि, तू राजाके घरके चूहोंको मार डाल । बिल्लीने कहा कि मैं आज ही सब चूहोंको मार डालू तो फलको क्या पाऊं ? सो भाई मैं तेरी सहायता नहीं कर सकती । तब वह चिडिया हिम्मत करके कुत्तेके पास गई और उससे कहा कि भाई तुम मेरी इतनी सहायता करो कि

अमुक बिल्लीको मार डालो । कुत्तेने कहा कि बिल्ली

ने मेरा क्या कसूर किया है जो उसको मार डालू, तब वहाँसे भी निरास हो वह चिड़िया एक थाँसके पास गई, उससे कहा लगी कि भाई थाँस ! तू अमुक कुत्तेको मार डाल तब थाँसने कहा कि मेरा उसने क्या कसूर किया है जो मारू ? तब वहाँसे निरास हो थाँसने पास गई और प्रार्थना करी कि—हे आगमाता ! तू इस थाँसको जला दे । आगने कहा कि मैं काहेको तफ्तीफ उठाऊँ ? तब वह चिड़िया एक छोटीसी तलश्या थी, उसके पास जाकर बोली कि तू इस आगको बुझा दे । तलश्याने कहा मैं ताँ नहीं बुझाती । तब वहाँ पर एक हाथी खड़ा था । उसने कहा कि भाई तू मेरेपर दया करके इस राँड तलश्याका सब पानी सुखा दे । तब हाथीने कहा कि उसका पानी पराब ही मैं तो नहीं पीता । तब वह चिड़िया बहुत ही सोच विचार करके वहाँ पर एक चींटी (फीँडो) थी उसके पास जाकर बोली कि बहिन ! मैं बहुत जनोंके पास हो आई परंतु किसीने मुझे सहायता नहीं दी सो बहिन ! तू थोड़ीसी मदद कर । तब चींटीने कहा—बहिन ! तेरी क्या इच्छा है ? मेरे लायक काम हो सो तुरत कह, मैं तब मनसे करनेको तैयार हूँ । तब चिड़ियाने कहा कि तू इस हाथानी सूँडमें चली जा, जिससे वह मर जाय । तब चींटीने कहा कि ले मैं अभी इसको सूँडमें जाती हूँ और इनको तेरे देखते देखते मार डालती हूँ । यह सुनने हो हाथीने घबड़ाकर कहा कि मेरी सूँडमें काँहको चढ़ती है ? मैं चिड़ियाके कथनानुसार इस तलश्याको सुराये देता हूँ । तलश्याने भी घबड़ाकर कहा कि मुझे काँहको सुखाता है मैं आगको बुझाये देती हूँ । आगने कहा कि मुझे काँहको बुझाती है ? मैं थाँसको जलाये देती हूँ ।

तब दासने कहा कि मुझे काहेको जलाती है, मैं कुत्तेको मारे डालता हूँ। कुत्तेने कहा मुझे काहेको मारता है ? मैं गिल्लीको मार डालता हूँ। गिल्लीने भी घण्टाके कहा कि मुझे काहेको मारेगा मैं चूहोंको मारे डालती हूँ। चूहोंने कहा कि हमें काहेको मारते हो ? हम रानियोंके कपडे काट डालेंगे। रानियोंने कहा कि हमार कपडे काहेको काटोगे ? हम राजा साहससे रुठ जायगी। राजाने कहा कि—हमसे कहेको रुठती हो ? मैं बढई (जाती) को जुरमाना कर दूंगा। बढईने कहा कि मेरे पर जुरमाना क्यों करते हो ? मैं कीकरको काटे डालता हूँ। कीकरने कहा कि मुझे काहेको काटता है। मैं कौचेको उड़ाये देता हूँ। कौचेने कहा कि मुझे काहेको उड़ाता है ? लो मैं चिडियाका मोती चिडियाको दिय देता हूँ।

इस कहानीसे यह शिक्षा लेनी चाहिये कि—भाजरूल हम लोग इतने बेहिम्मत हो गये हैं कि—किसी भी कार्यको प्रारंभ करते हैं तो किंचित्मात्र विघ्न आनेपर भट छोड देते हैं, या किसी कार्यके करनेमें एकबार सफलता नहीं हुई तो फिर उससे निराश हो छोड बैठते हैं। सो ऐसा कदापि नहीं होना चाहिये। शरवार साहस करके उस कार्यको करना चाहिये, चिडियाकी तरह उपाय करते रहनेपर कभी न कभी यह कार्य अग्रश्य ही फलीभूत होगा, क्योंकि उद्यम कभी व्यथा नहीं जाता।

अट्टावनवां पाठ ।

सु दरलाल ।

अनेक उत्तमोत्तम गुणोंके समान 'हिम्मत (साहस) भी बड़ा भारी गुण है। हिम्मत रखनेसे कैसे ही कठिन कार्य क्यों न

हों, वे सब सिद्ध हो सकते हैं । हिम्मतवान मनुष्य इस दुनिया में निर्भय चलता है । रिचा, धन, दौलत, तप, सयम और सुख जगैरह सब हिम्मतके अधोन हैं । जिसमें हिम्मत होनी है, उस मनुष्यको प्राप्त न हो सके ऐसी कोई भी सपदा नहीं है । कुल, जाति, समाज, ग्राम और देशका अभिमान रखनेवाले पुरुष हिम्मत हो तो अभिमान रखकर सब हा थकड़े २ कार्य कर सकते हैं । उद्योगी व्यापारीगण हिम्मतमें ही बड़ा भारी धन पैदा कर सकते हैं, तपस्वीगण भ्याग जगैरह तपस्या व महाधन पाल सकते हैं, और सब जने हिम्मतसे ही सब तरहके सुख प्राप्त कर सकते हैं । हिम्मत गुणमें ही सुदरलालने पांच जीवोंको बचाकर उन्हें जीवदान देकर सुधी किया था, सो सुनो—

वर्द्धमान नगरमें सुदरलाल नामका एक जैनी था । वह धर्मात्मा और परापकारी था । उसमें हिम्मत गुण सबसे बढकर था । चाहे जैसा कठिन कार्य क्यों न हो, वह हिम्मतके प्रभापसे कर सकता था । जिस कार्यके सिद्ध करनेमें अन्य जन कायर होकर ना उम्मेद हो जाते थे, वह कार्य सुदरलाल सिद्ध कर सकता था । सुदरलालकी माता बडी गुणवती थी, और भी अनेक गुण उसमें थे परन्तु हिम्मतगुण नहीं था, हरएक बडे २ कार्यमें वह कायर हो जाता थी ।

एक समय सुदरलाल गर्मीके कारण छतपर सो रहा था, नगरमें जवानक ही बडा भारी फोलाहल (हला) सुनकर वह जग पडा और उठकर देखा तो मालूम हुआ कि किसीके घरमें लाय (जाग) लग गई है । सुदरलाल उम्नी बक्त घहा जानेके लिये तैयार होने लगा । उसकी माने मनाही की कि—बेटा !

रखा नहीं जाना, वहा जानेसे तुम्हारे शरीरपर कुछ न कुछ आफत
 लाना समझ है । सुदरलालने कहा कि अम्मा यह क्या कहती है ?
 इस फायरपनके घबचन कभी नहीं कहने चाहिये । किसी विचारे
 गांवका घर जलना होगा तो उसे जाकर सहायता (मदद)
 लाना चाहिये । भयके मारे फायर होकर बैठे रहना फायर व
 शमरदबा काम है ।

इसप्रकार माताको समझा कर वहा भागता हुआ गया तो
 पता देखता है कि—मोतीलाल गामके एक व्यापारीके घरमें चारों
 तरफसे आग लग गई है । घरमें मोतीलाल और उसके दो लडके
 लाल और एक गइया और गइयाका एक बच्चा था । मोतीलाल तो
 किसी प्रकार निम्नल धाया परतु उसकी स्त्री, बच्चे, गाय और
 बछ्वा भीतर ही रह गये । उनके निकालनेका कोई उपाय नहीं
 था, हजारों आदमी वहापर खड़े २ चिंता कर रहे थे, मोतीलाल बड़े
 दुःखसे चिल्ला २ कर रो रहा था कि—हाय मैं मर गया, मेरी स्त्री
 बच्चा गइया घुलडा जल गया । उसका रोना सुनकर समूही लोग
 उसके दुःखसे बड़े दुःखित होकर आसू बहाते थे, परतु किसीकी
 ऐसी हिम्मत नहीं थी कि उस जलने हुए घरमें घुसकर किसी
 को बचाता । सुदरलाल यह बात सुनते ही, दरवाजेकी दोनों
 तरफ आग लग गई थी तथापि हिम्मत करके उसी वक्त घरमें
 घुस गया आश्चर्यके साथ सब जने उसकी हिम्मतकी तारीफ
 करने लगे । पहिले तो मोतीलालकी स्त्रीको कंधेपर चढाकर बाहर
 ले आया दूसरीबार फिर घुस गया सो दोनों लडकोको दोनो
 बगलमें दबाकर ले आया । तीसरी बार गया सो गइया और
 सुदरलालसे ररती सींचता २ दरवाजेके

पास लाया और पीछेसे धकेलकर बाहर कर दिया। बागकीर लपट और गर्मोंसे उसका शरीर बड़ा भारी झुलस गया था परन्तु उन पाँचा जीवोंको बचा लेनेसे उस पीटाको कुछ भी नर्हि जागा, चित्तमें बड़ा आनन्द माना, क्योंकि चारों तरफसे सब लोग धन्य धन्य कहते और उसकी प्रशंसा करते और कहते थे कि—धन्य है इसकी माता और इसकी हिम्मतको जो आज पाँच जीवोंको प्राणदान देकर बचा लिया और बड़ा भारी पुण्य उपार्जन किया।

तत्पश्चात् पद्ममानके लोगोंने एक दिन बड़ी भारी आमसभा करके सुदरलालको एक मानपत्र दिया और पद्ममानके राजाने सुदरलालकी इस हिम्मतसे खुश होकर एक शायर इनाममें दिया। वही दिनसे ही सब लोग सुदरलालसे हिम्मतका पाठ सीखने लगे।

हे बालको ! तुमको भी चाहिये कि निडर होकर सुदरलालकी तरह अच्छे २ हिम्मतके (साहसके) कार्य करके अपनेको सुधी बनाओ ।

उनसठवां पाठ ।

विद्यार्थीभेद ।

विद्यार्थी अर्थात् कहिये चाहनेवाले अर्थात् विद्याके पढ़नेवाले हों उनको विद्यार्थी कहते हैं । साँ विद्यार्थी उत्तम मध्यम अधम भेदसे तीनप्रकारके होते हैं ।

उत्तम विद्यार्थी—उत्तम और उपजाऊ भूमि सरीखे होते हैं उत्तम भूमिमें थोड़ेसे बीज डाले जाय और उनकी रक्षा भले प्रकार नर्हि की जाय तौ भी बहुत सा फल होता है । उसीप्रकार उत्तम विद्यार्थीको गुलने थोडा भी विषय समझाया हो तो यह अपने परिश्रमसे उस विषयको बहुतसा जान लेता है ।

मध्यम विद्यार्थी—तोतेकी तरह होते हैं । जैसे तोतेको जितने गे उतने ही याद कर लेगा, उससे अधिक याद नहीं कर सका । इसीप्रकार मध्यम विद्यार्थीको गुरुजी जितना पाठ श्राव्य है उतना ही पाठ याद करता है, उस विषयको न्यूनाधिक समझनेकी शक्ति नहीं रखता ।

अधम विद्यार्थी—कूपमेंसे पानी निकालनेवाले फूटे बर्तनके समान होता है । जैसे फूटे बर्तनको कूपमें किसी प्रकार डबोकर नर भी लिया तो ऊपर खींचते २ सत्रका सब पानी निकल जाता है इसीप्रकार अधम विद्यार्थीको चाहे जितना पाठ पढाओ अथवा सुराओ किंतु थोड़े समय बाद सत्रको भूल जाता है ।

इसी प्रकार इन्हीं तीनोंके कई भेद होते हैं । जैसे कोई विद्यार्थी चलनी सरीखे होते हैं । जिस प्रकार चलनीमेंसे अच्छा २ पैदा या भाटा तो निकल जाता है और बूर (चापड) चलनी में रह जाती है इसीप्रकार चलनीके सदृश विद्यार्थीको जो जो विषय पढाओगे उनमेंसे गुणोंको छोडकर अशुणोंको ग्रहण कर लेगा । तथा कोई कोई विद्यार्थी हस सरीखे होते हैं । जैसे हंसके सामने पानी और दूध मिलाकर रख दो तो वह पानीको छोडकर दूधको पी जाता है । इसीप्रकार जो विद्यार्थी अपने पाठोंमेंसे अच्छी तरहकी शिक्षाओंको और गुणोंको ग्रहण कर लेता है और अधगुणोंको छोड देता है उसको हस सरीखा उत्तम विद्यार्थी कहत है । तथा कोई २ विद्यार्थी लाज सदृश होते हैं जिसप्रकार लाज अग्निका सयोग मिलनेसे नर्म होकर गल जाता है और अग्निका सयोग दूर हुएबाद जैसाका तैसा कठिन हो जाता है । इसीप्रकार जो विद्यार्थी गुरुजीसे किसी दितशिक्षाको सुनकर

उस समय ही ऐसे विद्यार्थी जाते हैं कि उन शिक्षाको सत्यता प्रदर्श कर लेनेको प्रतिभा भी कर लेते हैं । परंतु गुदकोके गामन करते ही सब यानें भूल जाते हैं, उनको त्वाय सद्गुरु विद्यार्थी कहते हैं, समाप्रकार और भा अोकप्रकारके विद्यार्थी होते हैं । परंतु तुम सबको इसका मद्दश उत्तम विद्यार्थी यानका उपाय करना चाहिये ।

साठवा पाठ ।

दयानु दयाराम ।

धर्मका मूल दया है । दयालु मनुष्य ही अहिंसात्मय परमधर्मको धारण कर सकता है । प्रत्येक जीवपर दया रखना जैनोंका मुख्य कर्तव्य है । किसी भी जीवको किसी भी प्रकारकी तकलीफ देना व मारना नहीं, श्री अरहत भगवानो अपने भागममें इसी अहिंसाधर्मका जगह जगह उपदेश देकर हर मनुष्यको दयानु बननेकी आज्ञा दी है ।

मणिपुर नामके नगरमें एक दयाराम नामका धायक बड़ा भारी व्यापारी था । यह हमेशा जहाजोंके द्वारा अनेक देशोंमें अनेक तरहका माल लेजा लेजाकर बेचता व उन देशोंसे अपने देशमें आनेवाले पदार्थ ला लाकर बेचता था । दयाराममें हर एक जीव पर दया करनेका गुण ही प्रधान गुण था । किसी भी जीवको दुःखी देखता था तो उसी वक्त तन मन धासे सहायता कर के उसका दुःख दूर कर देता था । रास्तेमें किसी भी पशु पक्षी वगैरह जीवको दुःखी देखता तो उसको सादर-समाल करनेके लिये पीजरापोलमें जाकर रख देता था । सामुद्रिक व्यापारसे उसने बड़ा भारी धन कमाया था ।

एकसमय किरानेका जहाज भरके एक देशमें व्यापार कर

रास्तेमें एक नगरमें उसने जहाजका लगाया
 देखनेमें आया कि—अनेक फसाई मिलकर एक जहाज
 में डबकरा घगैरह जानवर खरीदकर किसी एक देशमें
 बेचनेके लिये ले जा रहे हैं, वह जहाज भी उसी
 पास पड़ा था । उसमेंसे जानवरोंकी चिह्नाहट सुनकर
 एक मनमें दया आई और जहाजसे उतरते ही फसाइयोंके जहाज
 तक आकर उसके मालकोंमें कहा कि—मुरो ये सब जानवर मोल
 लई सो क्या लोगे । उन्होंने कहा कि एक लाख रुपये दो तो
 सबके सब दे सकते हैं । तब दयारामने उसी वक्त स्वीकार
 करके उसा नगरमें घाटा खा घरके भी अपना सब माल बेचकर
 एक लाख रुपये लाया और उस फसाईको देकर सब जानवर
 खरीद लिये और अपने जहाजमें चढाकर मणिपुर ले आया । घर
 पहुचनेपर भाइ बंधुओंने पूछा कि—अबकी बार कैसा व्यापार
 किया ? दयारामने जबाब दिया कि “मैंने अपनी जिंदगी भरमें
 कभी नहीं किया ऐसा व्यापार अबकी बार किया है और बहुत ही
 फायदा उठाया है ।” तत्पश्चात् ये पशु सार सभाल करके उनके
 मानेके लिये बहुत भारी रकम देकर एक गुदा ही पींजरापोल
 खोलकर उसमें छोड़ दिये । जब घरवालोंने पूछा कि किरानेकी
 रकम कहा गई तो दयारामने कहा कि यह सब धन जीरदयाखाते
 में लगाकर शहरके बाहर एक नयी पींजरापोल खोल दी है । फिर
 उसका ब्योरेवार सब हाल कह कर समझा दिया कि—

दया बरोबर तप नहीं, दया बरोबर धर्म ।

सबमें दया प्रधान है करहु दया शुभ कर्म ॥ १ ॥

यह हाल : : : : : सब जने खश हये ।

दिया और नगरके राजाने दयारामको बड़ा भारी छिताय दिया। इसलिये तुमको भी चिपटीसे हाथी तक सब जीवोंपर दयाम् रखकर उनको निर्मय करके अभयदान करते रहना चाहिये । १५

इकसठवां पाठ ।

आपका सदुपयोग ।

किसी गात्रका रहनेवाला रामरतन नामका घणिक एक पेटपेटे में (आठवाड़ेके बाजारमें) गया था। आते समय वह घड़ुआ अन्धे पके हुए ५ कलमी आम लाया। उसके हीरालाल, मोतीलाल, सोहनलाल और मोहनलाल ये ४ पुत्र थे, चारोंही धार्यायस्थानोंमें थे। रामरतनने चारों बेटोंको जुलाकर कहा कि लोहा बाज में ५ कलमी आम लाया हू। इसमेंसे एक एक तो तुम्हारे लिये है, सो तुम लो और एक तुम्हारी माके लिये है, सो जाओ उसे दे दो। यह सुन और आम पा कर घे लडके अतिशय आनन्दित हुए, क्योंकि उन्होंने ऐसे आम कमी नहीं देखे थे।

पिर सभ्याको सोनेके समय पिताने अपने चारों लडकोंसे पूछा कि क्यों रे छोकरो! ये आम कैसे थे? तुमको कैसे मीठे लगे उनमेंसे बड़ा लडका हीरालाल बोला कि पिताजी! यह आम बहुत अच्छा था, उसका रस कितना मीठा था सो मैं नहीं कह सका! उस आमको मैंने सर्वोत्तम समझ उसकी गुठली यत्नके साथ रख दी है। जब घोनेके दिन आयगे तो उसको अपनी बगियामें बो दूंगा। जब पेट बड़ा हो जायगा तो उससे बहुत आम मिलेंगे। यह सुन पिताजीने कहा कि सायास बेटे सायास! तू बड़ा प्रियेकी है, भविष्यके कल्याय करनेमें पहिलेसे ही सावधान होनेवाला तू ही है। जो अच्छे किसान होते हैं, वे अ

सबके लिये अच्छे २ घोड़े पहिलेसे रख छोड़ते हैं । तब
 उसके छोटे मोहनलाल लड़केने कहा कि पिताजी मैंने
 आग उसी घण्टे खा लिया और उसकी गुठली फेंक दी ।
 पिताजी अम्माने भी मुझे अपने आममेंसे आधा हिस्सा
 दिया, वह भी खा लिया, उसके मीठेपनकी तारीफ़ कहातक
 कि मुहमें रखते ही मक्खनकी माफ़क पिघल जाता था ।
 पिताजीने कहा कि तूने होशियारीका काम नहीं किया, तू छोटा है,
 कारण यह काम तुझसे हुआ, जब तू बड़ा हो जायगा तो
 तुझे बुरेका विचार होगा ।

पिताजी तीसरा लड़का मोतीलाल बोला कि पिताजी मैंने जो
 किया वह विचारके बहुत अच्छा किया मोहनाने जो गुठली
 फेंक दी, वह मैंने आगमें सेकरार खाई सो बहुत मोठी नि
 दा, उसके खानेसे बड़ा आनन्द हुआ और मेरी घाटमें जो आम
 खाया था वह मैंने बाजारमें बेच दिया उसके मुझे इतने पैसे
 मिले कि बाजारमें उसके ४५ आम मिलेंगे । यह सुन पिताने मुह
 फाड़ कर कहा कि—तूने विचार करके तो काम किया परंतु मुझे
 अच्छा नहीं लगा क्योंकि यह काम धृपणताका है यद्यपि लड़कों
 को विचारके काम करना चाहिए, परंतु इस प्रकारका विचार
 नहीं यदि तू हीरालालके माफ़क करता तो अच्छा था ।

चौथा लड़का सोहनलाल जा कि हीरालाल मोतीलालने
 कहा था और मोहनसे कहा था, वह चुपचाप खड़ा था, उसने
 उमी नहीं कहा था पिताने उसकी ओर दृष्टि करके पूछा कि
 हेन ! तूने अपने आमका क्या उपयोग किया ? सोहनने हाथ
 ड़कर विनयके साथ कहा कि पिताजी ! अपने पड़ोसीके यहाँ

जो एक नोकरणी रहती है उसके तेरे महादेवको आज १३ दिनोंसे चुपार आना है । चुपारक मारे उसकी देही धागसी उर रही है, घड़ी घड़ीमें उसको प्यास लगती है और पानी भा थोड़ा थोड़ा पिलाते हैं, मगर उसकी प्यास नहीं बुझती, मैंने विचार किया कि महादेव यह आम खा लेगा तो उसकी थोड़ी बहुत प्यास मिट जायगी, ऐसा समझ मैंने यह आम उसको लेजाकर दिया और खानेको कहा, मगर उसने किसी प्रकार भी ले मंजूर नहीं किया, तब मैं उसके पिछौने पर आम रखने चल आया । इस बातके सुनते ही पिताके आनदाश्रु भर आए और चार लडकोंस धोला कि अच्छा तुम ही बताओ कि तुम चारोंमेंमे वह आम किसने अच्छे काममें लगाया ? यह सुनकर सोहन तो चुप रहा परंतु शेषने नीनों भाई एकदमसे कह उठे कि "सोहनने सोहनने" सोहन तो चुप था, उमनी माने वहे प्यारके साथ चुम्मा लेकर छातासे लगा लिया, माताको उस समय बहुत ही आनन्द हुआ, आनन्दके मारे उसकी आंखोंमें आसू धागये, उसे देखकर सोहनलालको जो आनन्द हुआ, वह आनन्द यदि घैसे २ बीस धाम उसका मिलते तो भी नहीं होता ।

इस फदानी परसे यह शिक्षा लेना चाहिये कि परोपकारमें तन मन धन लगानेसे जो सुख प्राप्त होता है, वह किता अर्थ कार्यसे नहीं होता ।

बासठवा पाठ ।

गढा खोदे सो पडे ।

किसी शहरमें एक ब्राह्मण राजाके कानमें जाकर फोड़ मन्त्र व आशीर्वाद कहा करता था । उसको देख राजाने नाईसे

गई गया । एक दिन नार्दने उस ब्राह्मणको कहा कि आप
 कानमें प्रतिदिन मुद्द लगाके कुछ कहा करते हैं, सो
 ब्राह्मणको अच्छा नहीं लगता क्योंकि तुम्हारे ग्यासमें दुर्गंध
 (कदु) आती है । इसकारण महाराजके कान और अपने मुद्द
 वाचमें कपडा रखाकर कहा करो तो अच्छा है । ब्राह्मणने इस
 बातको मन्त्र मानकर कहा कि कलसे ऐसा ही काम करूंगा ।
 फिर राम नार्दने राजाके पास जाकर यह कहा कि महाराज !
 अमुक ब्राह्मण प्रतिदिन आकर आपके कानमें कुछ कहा करता
 है, सो उम्मे कई जनोके सामने मुझसे यों कह कि—महाराजके
 कानमें बड़ा दुर्गंध आती है, सो अगसे मैं कानके बीचमें कपडा
 लगाकर कहा करूंगा । तत्पश्चात् दूसरे दिन ब्राह्मणने कान और
 मुद्दों वाचमें कपडा लगाकर मन्त्र व आशीवाद पढा, तो राजाको
 शर्क कहना यथार्थ मालूम पडा । देवयोगसे ब्राह्मणने उसी दिन
 महाराज व प्रार्थनाकी कि महाराज ! मुझे आपका सेवामें हाजिर
 होने बहुत दिन हो गये, सो अब कृपादृष्टि होनी चाहिये । राजा
 सादरन कहा कि “अच्छा ! कल तुमको चिट्ठी मिलेगी” इस
 बातके सुननेसे उस हज्जामको निश्चय हुआ कि—महाराजकी
 ब्राह्मणपर बड़ी प्रीति है, मेरे कहनेका कुछ भी असर नहीं हुआ
 इसकारण इसको कल दक्षिणाकी चिट्ठी मिलेगी, सो ब्राह्मण
 देवतासे कुछ भपटना चाहिये । यह विचारकर वह नाई ब्राह्मण
 देवताके घर पर पहुंचा और कहने लगा कि महाराज, मैंने कौसी
 ? इसीकारण महाराज आपपर
 मिलेगी और फिर महीनेकी
 प्रथम चिट्ठी मिलेगी

देवताने भी दना स्वीकार कर लिया । दूसरे दिन राजासाहबने उस ब्राह्मणको एक बड़ चिट्ठा दा । (जिसमें यह लिखा था कि इस चिट्ठी लानेवालेका मुद्द काला करके गधेपर घटाकर सार शहरमें फिराना) और कह कि यह चिट्ठी फोतवालसाहबको दना, ब्राह्मणने यह चिट्ठी प्रतिज्ञानुसार नाइको दे दी और उस नार्ने फोतवाल साहबको दे दी, तो फोतवाल साहबने उस चिट्ठाकी तामो नार्पर फर दिखाई । नाइ यह दुर्दशा भोगकर मन ही मन कहता लगा कि "गढा प्योदे सो ही पढे" यह कहायत धाम्तरमें सत्य है । आइके प्रतिज्ञा कर ला कि फिर में ऐसा काम कदापि नहि करूंगा ।

इस कहानासे यह शिक्षा लेना चाहिय कि किसीका बुरा चितना अच्छा नहीं, जो किसी दूसरेका बुरा चितवन करेगा, उसने उक्त नार्को तरह दुःख उठाना पड़ेगा । इस जगह क्यार-दासजीका यवन स्मरण होता है कि,—

जो तोऊ कांटा बुये, ताहि बोदि तू फूल ।

तोहि फूलका फूल है, वाको है तिरशून ॥ १ ॥

तिरेसठवां पाठ ।

मोतीकी उत्पत्ति ।

प्राचीन कालमें मोती हस्ताके मग्नकमेंसे भी निकलते थे, जिनको कि गजमोती कहते हैं । परन्तु आजकल न रहे और न वे मोती ही रहे । वर्तमान समयमें जो पुर में आते हैं, वे एक प्रकारकी मच्छियोंकी सीपमेंसे उनको सच्चे मोती कहते हैं । और जो यनाये जाते हैं, वे सब

होते हैं । जिन सीपोंमें मोती होते हैं वे सीपें मच्छियोंके शरीरमें कदामकी माफिक दो भाग चिपकी हुई हड्डी होती हैं और वे मच्छियें (सीपें) समुद्रोंके किनारों पर कई देशोंमें मिलती हैं जिनको कस्तूरामच्छी कहते हैं । हिंदोस्थानमें मोती मिलनेका सबसे प्रसिद्ध ठिकाना लका देशका पश्चिम किनारा है । वहापर अपरेल और मई महीनामें उन मच्छियाँका अहेर (शिकार) होता है ।

मोती एक गोल गोल दाना होता है जो कि सफेद व सुनहरा तथा गुलाबी रंगका भी होता है । प्राचीन विद्वानोंका मत है कि आश्विन मासमें सोपवाली मच्छियें समुद्रपर तैर आती हैं, और स्याति नक्षत्रके दिन जिन जिन मच्छियोंकी सोप (पेट) में मेहकी वृद्ध पड़ जाती है उहो जमकर मोती हो जाती हैं परंतु आधुनिक विद्वान् कहते हैं कि मच्छियोंको एक प्रकारके रोगके होनेसे मोती उत्पन्न होते हैं । लकामें मोती कदाची नमक समुद्र की पडीमें बहुत मिलते हैं, इन खाडीके किनारों पर मीनार द्वीप आरेपो कदाची और पपोरियो नामके नगर हैं, समुद्रके जिस हिस्सेमें सोपिया निकलती है वह किनारेसे १० कोशकी दूरी पर है, और उहा पर प्राय ४० ५० फुट पानी रहता है, यह स्थान अंगरेज सरकारके अधिकारमें है, अंगरेज सरकार मोती निकालने वालेको नियत समयपर ठेका दे देती है, कभी कभी ऐसा भी होता है कि सरकारकी तरफसे भी मोती निकाले जाते हैं ।

जिस स्थानमें सोपिया पाइ जाती है उसके छे या ५ विभाग कर दिये जाते हैं और प्रत्येक भागमें पारी पारी (पारो पारी) से सोपियोंका अहेर होता है, प्रति वर्ष हरएक भागमें अहेर नहि होता, क्योंकि कस्तुरा

लिये कमसे कम ७ घण्टे समयकी आवश्यकता है, जब सीपि योंका अहेर होता है, तब समुद्रके किनारे पर ठेकेदार व्यापारी मजदूर आदि लाखों मनुष्योंकी भीड़ हो जाना है, यह अहेर प्राय डेढ़ महीने तक होता है। ठेकेदारोंकी अनेक गोकार्यें होती हैं। हरएक नौकापर दश दश डुब्ये (जो कि पानीमें डूबकर बहुत देर तक दम साधे रहें) रहते हैं, जो एक साथ पान्च डुब्ये गोते मारते हैं, डोंगियो (नौकाओ) से घडे २ पन्धर लटकाते हैं, उनके साथ ही घे डुब्ये जमाा पर (जहा कि सीपिमें जमानसे रिपकी हुई रहता है) पहुँच जाते हैं। हरएक पत्थरके साथ एक एक टोकरा बधी रहती है सो घे डुब्ये सीपियोंकी छुरीसे छुडा छुडा कर १॥ मिनिटमें टोकरा भर देने हैं, दो मिनिटमें पूरे होते होते डोंगीवाले उनको खींच लेते हैं, फिर दूसरे पाच डुब्ये डुबकी लगाते हैं, इसीप्रकार हरएक जादमा घारी घारी ' ० घार डुबकी मारता है। दुपहरके बाद सीपियोंस भरी हुई ताब लेकर किनारे पर आ जाते हैं, और किनारे पर उन सीपियोंका ढेर लगा देते हैं, फिर उनको सडाते हैं जिनकी दुग्ध पेसी तेज होती है कि मनुष्य सह नहिं सक्ता, परंतु मजदूर लोग पेटके लिये सत्र सह लेते हैं, फिर उनको घडे घडे लकडोंके पीपोंमें व नादोंमें भर कर धोते हैं जिससे सीपें अपने आप अलग हो जाती हैं, और मोती अलग हो जाते हैं। मोती तथा सीप महीन चलनीसे छानकर सब जानिके मोती निकाल लेते हैं। मोती बडी चलनीमें रहते हैं, घेडी जानके होते हैं उससे छोटे छिद्रवाली चलनीमें रह जाते हैं, वे मझोल मोती होते हैं, और तासरी चलनीमें हैं वे सबसे छोटे हैं, सरकारको कई लाख रुपये मोतियोंके ठेकेमें मिलते

है। हिंदुस्थानी लोग पीले रगड़े मोतीको पसंद करते हैं। मगर अंगरेज लोग सफेद रगड़े मोतियोंको अधिक चाहते हैं। जिन सीपोंमेंसे मोती निकालते हैं वे भी मोतीका तरह चमकनी है। चीन और जापानके कारीगर सीपोंके मोती बटन वगैरह बहुत चीजें बनाते हैं। बंगाल देशमें सीपका चूना भी पनना और पानके साथ खाया जात है।

चौसठवां पाठ ।

गुरु शिष्य प्रश्नोत्तर ।

शिष्य—महारज ! वास्तवमें पंडित कौन है ?

गुरु—जो प्रियेकी हो अर्थात् विचार पूर्वक स्वयं सुमार्गमें चले और दूसरोंको भी सुमार्गमें चलावे ।

शिष्य—मूर्ख कौन है ?

गुरु—प्रियेकी लोग, जोकि पंचेंद्रियके प्रियोंमें सुख ढूंढते हैं।

शिष्य—सुभद्र (शुरवीर) कौन है ?

गुरु—जिन्होंने विषयकषाय जीत लिये हों ।

शिष्य—कायर कौन है ?

गुरु—जो इन्द्रियोंको घश नहीं कर सकते ।

शिष्य—किस मनुष्यका जन्म सफल है ?

गुरु—जो धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये चार पुष्ट्यार्थ साधता है ।

शिष्य—जगतमें धन्य कौन है ?

गुरु—परोपकारी और सम्यग्दृष्टि ।

शिष्य—सर्वथा धिक्कारने योग्य कौन है ?

गुरु—जो किसी बातकी प्रतिष्ठा करके भगकर दे ।

शिष्य—मित्र कौन है ?

गुरु—जो हितवाञ्छक हो अर्थात् जो पाप या प्रमादसे निवारण करके परमार्थमें लगावे ।

शिष्य—जीर्णोष्ण शत्रु कौन है ?

गुरु—प्राध मान माया लोभ और अनुद्योग (उद्यम नहीं करना)

शिष्य—मलीन कौन है ?

गुरु—महापापी जोकि महामिथ्यात्व और पाचों पापोंमें लिप्त हो ।

शिष्य—सदा पत्रिन्न कौन है ?

गुरु—बालप्रह्वचारी जिसका कि मन शुद्ध हो ।

शिष्य—मनुष्य होते भी पशु समान कौन है ?

गुरु—जिनके मनमें हिताहितका विचार नहीं ।

शिष्य—अंधा कौन है ?

गुरु—जो कुगुरु कुद्वेष और कुशास्त्रको नहीं जनता और कुकार्यमें रत (लगलीन) हो ।

शिष्य—बहिरा कौन है ?

गुरु—जो हितकी बात नहीं सुनै अर्थात् सच्चे गुरुका उपदेश और सच्चे शास्त्रको नहीं सुनता ।

शिष्य—मूक (गू गा) कौन है ?

गुरु—जो समयपर हित मित सत्य और प्रिय वचन नहीं ब्रह्मे

शिष्य—पगु कौन है ?

गुरु—जिसने तीर्थयात्रा नहीं की हो ।

शिष्य—टोंटा (हाथरहित) कौन है ?

गुरु—जिसने औषधदान शास्त्रदान अभयदान और धाद्वारदानमेंसे एक भी दान नहीं किया हो ।

शिष्य—अलकार कौन है ?

गुरु—शोल (ब्रह्मचर्य) और मिथा ।

शिष्य-इस दु खमयी ससारमें जीवोंको शरण कौन है ?

गुरु-सच्चादेव और सच्चाशास्त्र और सच्चागुरु ।

शिष्य-जल्दी क्या करना चाहिए ?

गुरु-ससारसे छूटने मुक्ति या पानेका उपाय ।

शिष्य-मुक्तिका उपाय क्या है ?

गुरु-चारित्र सहित सम्यग्ज्ञान ।

शिष्य-नित्य क्या विचारना चाहिये ?

गुरु-ससारकी अनित्यादि अस्थायी ।

शिष्य-जीता भी मरा हुआ कौन है ?

गुरु-मूर्ख तथा जिसका शरीर कमी परोपकारमें नहीं लगा ।

शिष्य-रोगीका मित्र कौन है ?

गुरु-भौषध और पथ्यसेवन ।

शिष्य-मरे पीछे सहायता करनेवाला कौन है ?

गुरु-इस जन्ममें उपार्जन किया हुआ धर्म वा पुण्य ।

शिष्य-सरसे उत्तम घन कौनसा है ?

गुरु-विद्या ।

शिष्य-गुरु कौन है ?

गुरु-जो ज्ञानी होकर प्राणीमात्रके हितमें सदा तत्पर हो ।

शिष्य-उपादेय (ग्रहण करने योग्य) धर्म क्या है ?

गुरु-धर्मगुरुके वचन ।

शिष्य-हेय (त्यागने योग्य) क्या है ?

गुरु-अधर्म अर्थात् मिथ्यात्व और पाच पाप ।

शिष्य-त्रिष क्या है ?

गुरु-कुदेव कुगुरु और कशास्त्रकी भक्ति करना ।

शिष्य-इस ससारमें सार क्या है ?

गुरु-मनुष्य जन्म पाकर तत्पदशीं विद्वान् होकर निज परके
द्वितमें उद्यत (तन्पर) रहना ।

शिष्य-मदिराकी तरह मोहित करनेवाला कौन है ?

गुरु-प्रिययोंमें ममता ।

शिष्य-डाकू (लुटेरे) कौन है ?

गुरु-इ द्वियोंके प्रिय ।

शिष्य-ससारको बढ़ानेवाला बेल कौन है ?

गुरु-तृष्णा (भोगोंकी आशा) ।

शिष्य-इस ससारमें भय किसका है ।

गुरु-मरनेका ।

शिष्य-अधेसे भी अन्या कौन है ?

गुरु-रागी ।

शिष्य-बहुष्णता मूल क्या है ?

गुरु-कमा कोई याचना नहिं करना ।

शिष्य गहन (जिसको कोईभी नहिं जान सकता ऐसा) क्या है ।

गुरु-द्वियोंका चरित्र ।

शिष्य-चतुर कौन है ?

गुरु-जो खोज बालमें न फस ।

शिष्य-दरिद्रता क्या है ?

गुरु-भसतोष ।

शिष्य-लघुता क्या है ?

गुरु-याचना करना ।

शिष्य-मूर्खता क्या है ?

गुरु-चतुर होनेपर भा दानाभ्यास नहिं करना ।

शिष्य-सदा कौन जागता है ?

गुरु-त्रिनेकी ।

शिष्य-निद्रा क्या है ?

गुरु-मगुप्यकी मूर्खता ।

शिष्य-कमलपत्र पर पड़े हुये जलत्रिण्डु समान तरल क्या है ?

गुरु-जपानी, धन, और आयु ।

शिष्य-नरक क्या है ?

गुरु-पराधानता ।

शिष्य-प्रिय क्या है ?

गुरु-जीवोंको अपने प्राण ।

शिष्य-उत्तम दान क्या है ?

गुरु-नि स्वार्थ होकर दान करना ।

शिष्य-चरनोंका शोभा क्या है ?

गुरु-सत्य बोलना ।

शिष्य-मृत्यु क्या है ?

गुरु-मूर्खता ।

शिष्य-अमूय क्या है ?

गुरु-समयपर दिया हुआ दान ।

शिष्य-मरणपर्यंत शत्रु [दुष्टदायक वादा] क्या है ?

गुरु-गुप्तभाषसे किया हुआ कुकार्य ।

शिष्य-यत्न कहा करना चाहिये ?

गुरु-त्रिया पदोंमें और उत्तम धौपधिके दान करनेमें ।

शिष्य-सदा निरागता कहा रखना ?

गुरु-परधन, परस्त्री, और दुष्टजनमें ।

शिष्य—कठगत प्राण होतेभी किसका विश्वास नहि करना ।

गुरु—मूर्ख, मानी, वृत्तव्नी और विषयलपटका ।

शिष्य—पूज्य कौन है ?

गुरु—सदाचारी ।

शिष्य—जगतको किसने जीता ?

गुरु—सच्चे शातस्वभावाने ।

शिष्य—देवता भी जिसे नमस्कार करे येना कौन है ?

गुरु—जो दया करनेमें प्रधान पुरुष हो ।

शिष्य—सब जने किसके घरमें हो जाते हैं ?

गुरु—हित मित सत्यभापी और विनयीक ।

शिष्य—पिजलीके समान चंचल क्या है ?

गुरु—दुर्जनकी संगति और स्त्रियोंका प्रेम

शिष्य निन्दनीय क्या है ?

गुरु—वृषणता ।

शिष्य—प्रशसनीय क्या है ?

गुरु—उदारता (दानशीलता)

शिष्य—चित्तमणिरत्नके समान दुर्लभ क्या है ?

गुरु—चार धातें—१ प्रिय वचन सहित दान देना, २ गर्वरहित

ज्ञान, ३ क्षमासहित शूरता और ४ त्यागसहित धन ।

शिष्य—आश्चर्य क्या है ?

गुरु—यह मनुष्य सबको मरते हुए देखता है और अपनेको

अमर मानकर कुछ भी अपना कल्याण नहि करता ।

जैन-पाठशालाओंमें पढाने योग्य पुस्तकें

श्रीनेमीचन्द्र वाकलीवाल मालिक जैनमित्रमण्डली द्वारा प्रकाशित
ये पुस्तकें भी सस्थामें मिलती हैं।

निम्न लिखित सभी पुस्तकोंके लेखक

स्वनामधन्य श्रीमान् प पन्नालालजी वाकलीवाल हैं।

१। मौखिक वण परिचय	॥
२। जैनबालबोधक प्रथमभाग, सशोधित वद्धित पृष्ठ ८४	॥१
३। जैनबालबोधक दूसरा भाग पृष्ठ ११६	॥२
४। जैनबालबोधक तृतीय भाग २४० पृष्ठ जिल्दसहित	॥३
५। जैनबालबोधक चतुर्थभाग पृष्ठ ३६४	॥४
६। जैनस्त्रीशिक्षा प्रथमभाग नवीन छपा	॥५
७। जैनस्त्रीशिक्षा द्वितीय भाग	॥६
८। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) प्रथम भाग	॥७
९। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) दूसरा भाग	॥८
१०। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) तृतीय भाग	॥९
११। द्रव्यसंग्रह (नवीन छपा हुआ)	॥१०
१२। बालपद्मपुराण (पद्मपुराणका सार) बालकॉकिलिये	॥११
१३। ब्रह्मबिनास मैया भगवतीदासजीकृत जिल्द फिरसे छपा	॥१२

न्यायदीपिका मूल

संस्थाने फिरसे छपाया है, छात्रोंको पढानेमें बिलम्ब
नहीं करना चाहिये, मूल्य दो आना मात्र।

पत्र व्यवहार करनेका पता—

मैनेजर—भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था

६ विश्वकोषलेन, पोष्ट बाघबाजार कलकत्ता।

शिष्य—कठगत प्राण होतेभी किसका विश्वास नहीं करना ।

गुरु—मूर्ख, माना, घृतरुनी और त्रिष्यल्पटका ।

शिष्य—पूज्य कौन है ?

गुरु—सदाचारी ।

शिष्य—जगतको किसने जीता ?

गुरु—सच्चे शातस्वभावोंने ।

शिष्य—देवता भी जिस नमस्कार करे ऐसा कौन हैं ?

गुरु—जो दया करनेमें प्रधान पुण्य हो ।

शिष्य—सत्र जने किसके घशमें हो जाते हैं ?

गुरु—द्विन मित सत्यभाषी और वियायीके ।

शिष्य—यिजलार्थे समान चञ्चल क्या है ?

गुरु—दुर्जनकी सगति और लियोंका प्रेम

शिष्य निन्दनाय क्या है ?

गुरु—वृषणता ।

शिष्य—प्रशसनीय क्या है ?

गुरु—उदारता (दानशीलता)

शिष्य—चिंतामणिरत्नके समान दुलभ क्या है ?

गुरु—चार याते—१ प्रिय वचन सहित दान देना, २ गर्वरहित ज्ञान, ३ क्षमासहित शूरता और ४ त्यागसहित धन ।

शिष्य—आश्रय क्या है ?

गुरु—यह मनुष्य सत्रको मरते हुए देवता है और अपनेको अमर मानकर कुछ भी अपना कल्याण नहीं करता ।

जैन-पाठशालाओंमें पढाने योग्य पुस्तकें

श्री नेपीचन्द्र बाकलीवाल मालिक जैनमित्रमण्डली द्वारा प्रकाशित
ये पुस्तकें भी सस्यामें मिलती हैं।

निम्न लिखित सभी पुस्तकोंके लेखक

स्वनापधन्य श्रीमान् प पन्नालालजी बाकलीवाल हैं।

- | | |
|--|-----|
| १। पौरखिक वण परिचय | ॥ |
| २। जैनबालबोधक प्रथमभाग, सशोधित वर्द्धित पृष्ठ ८४ | ॥१ |
| ३। जैनबालबोधक दूसरा भाग पृष्ठ ११६ | ॥२ |
| ४। जैनबालबोधक तृतीय भाग २४० पृष्ठ जिल्दसहित | ॥३ |
| ५। जैनबालबोधक चतुर्थभाग पृष्ठ ३६४ | ॥४ |
| ६। जैनस्त्रीशिक्षा प्रथमभाग नवीन छपा | ॥५ |
| ७। जैनस्त्रीशिक्षा द्वितीय भाग | ॥६ |
| ८। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) प्रथम भाग | ॥७ |
| ९। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) दूसरा भाग | ॥८ |
| १०। जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) तृतीय भाग | ॥९ |
| ११। द्रव्यसंग्रह (नवीन छपा हुआ) | ॥१० |
| १२। बालपदमपुराण (पदमपुराणका सार) बालकोंकेलिये | ॥११ |
| १३। ब्रह्मविनास भैया भगवतीदासजीकृत जिल्द फिरसे छपा | ॥१२ |

न्यायदीपिका मूल

स स्याने फिरसे छपाया है, छात्रोंको भगानेमें बिलम्ब
नहीं करना चाहिये, मूल्य दो आना पात्र।

पत्र व्यवहार करनेका पता—

मैनेजर—भारतीय जैनसिद्धांत-प्रकाशनी संस्था

६ विन्धकोपसेन, पोष्ट बाघबाजार कलकत्ता।